ISSN : 2583-9411
(Online)

# शुभोदय

अन्तरराष्ट्रीय साहित्यिक ई-पत्रिका

वसंत अंक-2024

VOLUME : 03 | ISSUE : 01

प्रस्तुति

'शुभम्' साहित्य, कला एवं संस्कृति संस्थान (पंजी.), गुलावठी (बुलन्दशहर) उ.प्र. भारत

शुभोदय

साहित्यिक ई-पत्रिका

ईमेल: shubhodayashubham@gmail.com

वसंत अंक - 2024

ISSN: 2583-9411(Online)

Volume:03 * Issue: 01

संरक्षक

**डॉ. कमल किशोर गोयनका**

पूर्व उपाध्यक्ष, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान,

भारत सरकार

**प्रोफेसर महावीर सरन जैन**

पूर्व निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान,

भारत सरकार

प्रधान संपादक

**डॉ. देवकीनन्दन शर्मा**

मोबाइल - 9837573250

संपादक

**डॉ. ईश्वर सिंह**

मोबाइल - 9899137354

सह संपादक

**मुकेश निर्विकार**

**डॉ. संदीप कुमार सिंह**

**डॉ. नीलम गर्ग**

**डॉ. ब्रजराज यादव**

**डॉ. राजकुमार वर्मा (तकनीकी)**

प्रस्तुति

**'शुभम्'**

साहित्य, कला एवं संस्कृति संस्थान (पंजीकृत)

गुलावठी (बुलन्दशहर), उत्तर प्रदेश, भारत

डिज़ाइन

**त्रिगुण कुमार झा**

मो. : 9810679648

'शुभोदय' में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार रचनाकारों के हैं, उनसे 'संपादक मंडल' की सहमति होना अनिवार्य नहीं

# ‘शुभोदय’ (वसंत 2024) अनुक्रमणिका


| | |
|---|---|
| सरस्वती वंदना | 3 |
| प्रधान संपादक की कलम से | 6 |
| संपादक की कलम से | 7 |
| डॉ. दामोदर खड़से के साथ साक्षात्कार | 8 |
| **लेख** | |
| प्रो. महावीर सरन जैन | 12 |
| अरविंद कुमार ‘विदेह’ | 14 |
| डॉ. योगेंद्र दत्त शर्मा | 15 |
| पीयूष त्रिपाठी | 18 |
| मंजू सिंह | 20 |
| सुरेश चंद शर्मा | 22 |
| **कहानी / लघु कथा** | |
| डॉ. प्रभाकर जोशी | 25 |
| डॉ. राकेश चक्र | 27 |
| विपिन जैन | 29 |
| यशी | 31 |
| डॉ. दिनेश पाठक शशि | 32 |
| विष्णु सक्सेना | 33 |
| संदीप कुमार सिंह | 34 |
| गीता रस्तोगी ‘गीतांजलि’ | 36 |
| **कविता/गीत/ग़ज़ल** | |
| डॉ. केशव चंद्र कल्पांत | 38 |
| योगेंद्र कुमार | 39 |
| नेहा वैद | 40 |
| लाल देवेंद्र कुमार श्रीवास्तव | 41 |
| प्रगीत कुंवर | 42 |
| डॉ. भावना कुँवर | 43 |
| निर्देश निधि | 44 |
| अलका शर्मा | 45 |
| अवधेश सिंह | 46 |
| रवि कुमार | 47 |
| डॉ. जितेंद्र कुमार | 48 |
| शिवपूजन त्रिपाठी | 49 |
| राकेश वामन्या | 50 |
| प्रेम कुमार शर्मा ‘प्रेम’ | 51 |
| भारती कुमार | 52 |
| डॉ. ब्रजराज ब्रजेश | 53 |
| **पुस्तक समीक्षा** | |
| अरविंद कुमार ‘विदेह’ | 54 |
| रेखा देवी शर्मा | 57 |
| मुकेश निर्विकार | 59 |
| **साहित्यिक हलचल** | 62 |
| **चिट्ठी आई है** | 63 |
| **नियम** | 65 |

शुभोदय

# वर दे...

वर दे, वीणावादिनि वर दे,
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत-मंत्र नव
भारत में भर दे !

काट अंध-उर के बंधन-स्तर,
बहा जननि, ज्योतिर्मय निर्झर,
कलुष-भेद-तम हर प्रकाश भर,
जगमग जग कर दे,
वर दे, वीणावादिनि वर दे,
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत-मंत्र नव
भारत में भर दे !

नव गति, नव लय, ताल-छंद नव
नवल कंठ, नव जलद-मन्द्ररव,
नव नभ के नव विहग-वृंद को,
नव पर, नव स्वर दे,
वर दे, वीणावादिनि वर दे,
वर दे, वीणावादिनि वर दे,
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत-मंत्र नव
भारत में भर दे !

– सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

## प्रधान संपादक की कलम से

# देखो फिर आया वसंत ...

इस बात वसंत ने डुगडुगी बजाई..... 'बजाओ ढोल स्वागत में, मेरे घर राम आये हैं' सारा विश्व चहक उठा..... बात ही कुछ ऐसी थी... सदियों की पीड़ा का अंत हुआ... हमारे राम लला नव्य भव्य मंदिर में प्रतिष्ठित हुए..... भला इससे बेहतर वसंत और कोई वसंत हो सकता है .... शायद नहीं ...

वैसे भी वसंत जब-जब आता है तब-तब अपने साथ बेशुमार खुशियों के रंग और अकूत ऊर्जा का खजाना ही लेकर आता है .... वनस्पति हरिताभ हो उठती है, पक्षी चहचहाने लगते हैं... गगन से धरा तक सुनहरी किरणों का एक नयनाभिराम विताान तन जाता है ... सारा लोक उत्सवों की माधुरी में डूब जाता है ... मुझे तो वसंत एक जादूगर- सा लगता है ... मन को तरंग तो तन को पतंग बना देता है ..... वसंत श्रृंगार का महापर्व होने के साथ-साथ सृजन का भी विराट उत्सव है ....तभी तो वसंत के आते ही कलाकारों के कंठ में सरस्वती आ विराजती हैं और कलमकारों की कलमें अमृत टपकाने लगती हैं....

प्रकृति, प्रेम और सौंदर्य के इस महामेले मेले में 'शुभम् साहित*य कला एवं संस्कृति संस्थान अपनी अंतरराष्ट्रीय साहित्यिक ई-पत्रिका 'शुभोदय' के तृतीय वर्ष का प्रथम अंक 'वसंत' अपने सुधी पाठकों को सौंपते हुए गर्वित हैं... हमें विश्वास है कि 'शुभोदय' के सम्मानित कलमकार आपको समसामयिक चिंतन की वीथियों में भ्रमण करायेंगे, साथ ही आपकी चेतना में उन तरंगों को भी उद्वेलित करेंगे जो उदात्त मनस्विता का उद्रेक कर सकें .... अंक के सभी प्रतिष्ठित, चर्चित एवं नवोदित कलमकारों का कोटिश: अभिनंदन ... वंदन .;. अपनी तो आप जानें; फिलहाल मेरा मन तो कवि शेखर वत्स की इन पंक्तियों को गुनगुनाने का हो रहा है -

"फिर वसंत का भाव बदल जाना चाहिए
रंग दे वसंती चोला ही फिर गान होना चाहिए
बिजली भर देने वाले वो छंद सुनाने
देखो फिर आया वसंत नवगीत सुनाने "

श्रीमत्कुंज विहारणे नम:

डॉ. देवकीनंदन शर्मा

प्रधान संपादक

# संपादक की कलम से

## परिवर्तन ही अपरिवर्तनीय है .....

जीवन में यदि कुछ अपरिवर्तनीय है, तो वह परिवर्तन है। शरद अंक 2023 से वसंत अंक 2024 के बीच हम बहुत सारे परिवर्तनों की साक्षी बने हैं। अभी सोवियत रूस और यूक्रेन का युद्ध खत्म भी नहीं हुआ कि हम इजराइल और फिलिस्तीन/ हमास के बीच एक और युद्ध से अभिशप्त हैं। वर्षों के विवाद और कानूनी लड़ाइयों के बाद राम मंदिर का निर्माण पूरा हो रहा है और रामलाल की मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठा उत्सव के साक्षी भी हम इसी अवधि में बने हैं। हमारे चारों ओर हर पल, हर क्षण कुछ न कुछ ऐसा घटित हो रहा है जो जीवन, जगत और परिवेश को थोड़ा-थोड़ा परिवर्तित कर रहा है।

हमारे आस-पास जो कुछ घटित होता है वह हमारे सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक और साहित्यिक परिदृश्य को भी बदलता है, प्रभावित करता है। साथ ही यह मानवीय संवेदनाओं और विचारों को भी समान रूप से प्रभावित करता है। मगर इन सारे परिवर्तनों के बीच कदाचित साहित्य का दायित्व सामाजिक, नैतिक और मानवीय मूल्यों का सशक्तिकरण होना चाहिए।

'शुभोदय' 2024 का 'वसंत अंक' आपके हाथों में है जिसमें प्रतिष्ठित साहित्यकार डॉ. दामोदर खड़से का साक्षात्कार आपका ध्यान आकर्षित करेगा। इस अंक में भी आप कुछ परिवर्तन देखेंगे। सुधी पाठकों के सुझावों को मानते हुए इस बार पाठकीय प्रतिक्रियाओं को 'चिट्ठी आई है...' स्तंभ के रूप में शामिल किया गया है। सभी रचनाकारों के प्रति हार्दिक आभार ज्ञापित करते हुए पाठकों से विनम्र निवेदन है कि अपनी प्रतिक्रिया हम तक अवश्य पहुँचाते रहें, क्योंकि उन्हीं से हमें बेहतरी की राह मिलती है।

सादर,

डॉ. ईश्वर सिंह

संपादक

## साक्षात्कार

# "साहित्य जीवन को सार्थकता के साथ जीने की प्रेरणा देता है..." - डॉ. खड़से

**डॉ. दामोदर खड़से (एमए, एमएड, पीएच.डी-हिंदी), महाराष्ट्र राज्य हिंदी साहित्य अकादमी के कार्यकारी अध्यक्ष रहे हैं। वे प्रधानमंत्री भारत सरकार की अध्यक्षता से विभुषित केंद्रीय हिंदी समिति सहित लगभग एक दर्जन उच्च स्तरीय समितियों के सदस्य रहे हैं, साहित्य अकादमी और महाराष्ट्र भारतीय जैसे प्रतिष्ठित पुरस्कारों सहित अनेकानेक सम्मान और पुरस्कारों से सम्मानित हैं । कथा संग्रह, उपन्यास, कविता, समीक्षा, अनुवाद, यात्रा व भेंट वार्ता और राजभाषा विषयक आपकी लगभग 75 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं और कई पुस्तकें प्रकाशनाधीन हैं। आपके व्यक्तित्व और कृतित्व पर 7 ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं और देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों में उनके साहित्य पर शोध कार्य किया जा रहा है तथा अनेक विद्यार्थी पीएचडी और एम फिल की डिग्री हासिल कर चुके हैं।**

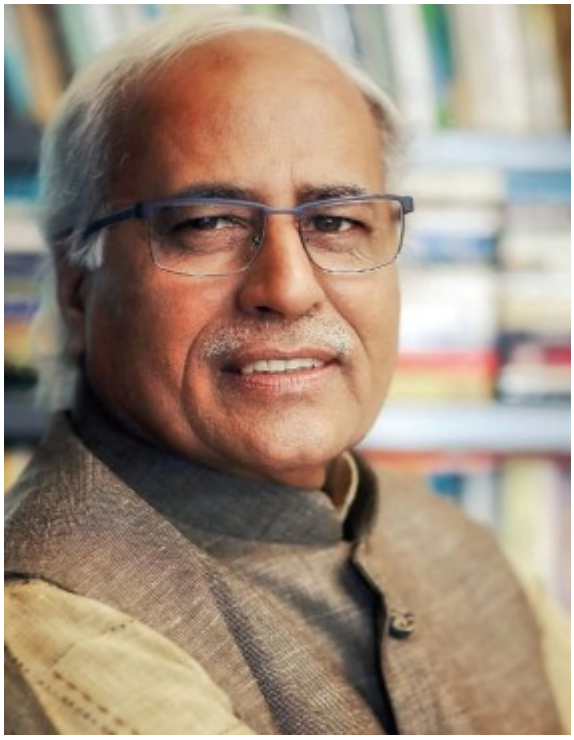

'शुभोदय' संपादक, डॉ. ईश्वर सिंह ने डॉ. दामोदर खड़से का वसंत 2024 अंक के लिए साक्षात्कार लिया जिसके प्रमुख अंश यहां दिए जा रहे हैं।

शुभोदय: खड़से साहब, हिंदी और मराठी दोनों भाषाओं पर आप समान अधिकार रखते हैं। अंग्रेजी के अलावा आपने मराठी से हिंदी में बहुत सा अनुवाद भी किया है। किसी साहित्यिक कृति का दूसरी भाषा में अनुवाद कितना सरल या कठिन है और अनुवादक के लिए किसी भाव को उसके निकटतम अर्थ में अंतरित करना कितनी बड़ी चुनौती है?

डॉ. खड़से : मैंने मूल रूप से हिंदी में ही लेखन किया है। मेरे साहित्य का मराठी,अंग्रेजी और भारतीय भाषाओं में अनुवाद हुआ है। मैंने मराठी से लगभग 21 कृतियों का हिंदी में अनुवाद किया है। एक कृति का अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद किया है। अनुवाद कार्य मेरे लिए एक पुनर्सृजन की तरह ही है। मूल कृति के सांस्कृतिक, सामाजिक और साहित्यिक पक्ष के साथ देशकाल, इतिहास, भूगोल, प्रथा-परम्पराओं आदि का ध्यान रखना होता है। आंचलिक शब्दों के लिए प्रति-शब्द और शैली की चुनौतियाँ उभरती हैं। अनुवाद करते समय मूल कृति की शैली और भावाभिव्यक्ति को समुचित न्याय देना प्रमुख चुनौती होती है। कविता और हास्य-व्यंग्यपूर्ण साहित्य समान प्रभावोत्पादकता के लिए विशेष ध्यान देने की मांग करते हैं। रस्मोरिवाज, प्रादेशिक खान-पान, भौगोलिक भिन्नता सभी भाषाओं में समानार्थी रूप में दुर्मिल हो जाती है कभी-कभी.....साथ ही कविता में अल्प-

विराम, दो पंक्तियों के बीच का अभिप्राय, सांस्कृतिक-ऐतिहासिक-सामाजिक आदि प्रतीकों के माध्यम से क्षेत्र विशेष का प्रकटीकरण अनुवाद करते समय विशिष्ट कौशल का आग्रह करते हैं। कभी-कभी कुछ कविताएँ इतनी क्षेत्रीयता और भावोत्कटता लिए होती हैं कि अनुवाद में उनका आवेग, प्रवाह, प्रभाव और रसग्रहण बनाये रखने में शब्द और वाक्य-विन्यास अनुवादक से विशेष न्याय की अपेक्षा करते हैं। सदानंद देशमुख के 'बारोमास' उपन्यास का और विंदा करंदीकर की कविताओं का अनुवाद करते समय मैंने विशेष रूप से इसे महसूस किया है। मानक भाषा का अनुवाद, आंचलिक साहित्य की तुलना में अधिक सरल होता है।

शुभोदय: चूंकि आप हिंदी और मराठी दोनों भाषाओं पर समान अधिकार रखते हैं तो हम आपसे यह भी जानना चाहेंगे कि भावों की अभिव्यक्ति के लिहाज से कौन सी भाषा अधिक सहज है और कैसे?

डॉ. खड़से: मुझे लगता है, कोई भी भाषा न कठिन होती है, न सरल। हम जिस भाषा के करीब होते हैं, बचपन से उसे आत्मसात करते चलते हैं, वह भावाभिव्यक्ति के लिए स्वाभाविक, सहज और सरल लगती है। फिर जो भी दूसरी भाषा हम बाद में सीखते हैं, उसमें दरअसल हम अपनी बुनियादी भाषा से लगभग अनुवाद की प्रक्रिया से ही गुजरते हैं। संभवतः इसीलिये कहा जाता है कि कविता मूल रूप से एक भाषा में अर्थात मातृभाषा में अवतरित होती है। दो भाषाओं में कविता में अभिव्यक्ति वाले लोग बिरले ही होते हैं क्योंकि मेरा जन्म हिन्दीभाषी क्षेत्र में हुआ, इसलिए मुझे बचपन से ही हिंदी घुट्टी की तरह मिली.....हमारा परिवार एकमेव मराठी-भाषी था। घर में मराठी मातृभाषा रही, पर घर के बाहर, स्कूल के माध्यम में मातृभाषा की तरह हिंदी मेरे साथ रही। इसलिए दो मातृभाषाएँ रही मेरी। लेखन-अभिव्यक्ति के लिए मातृभाषा हिंदी रही है और अनुवाद करने के लिए मराठी। पर अभिव्यक्ति की भाषा हिंदी ही है। इसलिए सारे अनुवाद मराठी-अंग्रेजी से हिंदी ही लक्ष्य-भाषा के रूप में रहे है। मौलिक लेखन हिंदी में मुझे अधिक सहज और अभिव्यक्ति सरल लगती है।

शुभोदय: आजादी के 75 साल बीत चुके हैं किंतु हमारी कोई अधिकारिक राष्ट्रभाषा नहीं है। इस परिदृश्य को आप किस रूप में देखते हैं?

डॉ. खड़से: भारत बहुभाषी देश है। 22 भाषाएँ संविधान की आठवीं अनुसूची में समाहित हैं। चौबीस भाषाओं में साहित्य अकादमी हर वर्ष पुरस्कार देती है। सैकड़ों की संख्या में उपभाषाएँ और हजारों की संख्या में बोलियाँ हैं। केंद्र सरकार की राजभाषा हिंदी है। भाषावार प्रदेशों की संरचना होने के कारण हर प्रदेश की अपनी भाषा वहां की राजभाषा है। समग्र रूप से केंद्रीय स्तर पर अपने कार्यालयों में और राज्यों के साथ हिंदी का प्रयोग होता है। इसे व्यावहारिक रूप देने के लिए राजभाषा नियम, अधिनियम आदि संविधान के प्रावधानों के अनुरूप बनाये गए हैं। सम्पूर्ण राष्ट्र में संपर्क और व्यावहारिक भाषा के रूप में हिंदी की उपस्थिति विद्यमान है। विज्ञापन, मीडिया, मनोरंजन,पर्यटन आदि में हिंदी का अस्तित्व निर्विवाद है।

शुभोदय: अंग्रेजी भाषा के शिक्षा जगत में और व्यवसाय के क्षेत्र में स्थापित दबदबे के बीच आप हिंदी के भविष्य को किस रूप में पाते हैं?

डॉ. खड़से: अंग्रेजी भाषा का प्रभाव शिक्षा जगत में ही नहीं पूरे समाज पर है। मनोवैज्ञानिक रूप से अंग्रेजी सम्पन्नता और शिक्षित होने के प्रतीक के रूप में स्थापित हो जाने के कारण उसका दबदबा सर्वत्र दिखाई देता है। प्राथमिक शिक्षा अंग्रेजी में प्राप्त करने की होड़ समाज के समर्थ वर्ग में है। उच्च शिक्षा में अंग्रेजी ने अपनी अलग जगह बना ली है।

शुभोदय: क्या नई शिक्षा नीति लागू होने पर आप इस स्थिति में कुछ बदलाव आने की उम्मीद करते हैं?

डॉ. खड़से : नई शिक्षा नीति में भारतीय भाषाओं- विशेषतः मातृभाषा में शिक्षा देने को प्रधानता दी गयी है। अब कुछ सम्भावनाएँ उभरती प्रतीत होती हैं। कई प्रदेशों में तकनीकी शिक्षा मातृभाषा में देने की तैयारी कर रहे हैं। मध्यप्रदेश में उच्च शिक्षा में हिंदी माध्यम की पढ़ाई, चिकित्सा क्षेत्र में भी प्रारम्भ की गयी है। इसके लिए पाठ्यक्रम के अनुसार हिंदी में पुस्तकें तैयार हुई हैं। साथ ही निरंतर रूप से हिंदी में तकनीकी साहित्य उपलब्ध करने के प्रयास किये जा रहे हैं। यह उम्मीद की जानी चाहिए कि अपनी भाषा में प्राथमिक से उच्च शिक्षा में मातृभाषा और हिंदी में लोगों का रुझान बढ़ेगा।

शुभोदय: कहते हैं कि जब तक हिंदी रोजगार की भाषा नहीं बन जाती, तब तक उसे इसी प्रकार अंग्रेजी के पीछे-पीछे ही चलना होगा। आपके विचार से हिंदी को बोलचाल और साहित्य से आगे ले जाकर रोजगार से जोड़ने के लिए क्या कदम उठाए जाने चाहिएं?

डॉ. खड़से: देखिए, अनौपचारिक क्षेत्रों में हिंदीमय वातावरण है। बाजार, आपसी संवाद, दैनिक कार्य-व्यवहार हिंदी में सहजता से होता है; धर्म, राजनीति, मनोरंजन जैसे क्षेत्र हिंदी में सराबोर हैं, लेकिन, औपचारिक क्षेत्र यथा- कार्यालयीन-कार्य, उच्च शिक्षा आदि में मातृभाषा या हिंदी की व्याप्ति को अंग्रेजी की तुलना में अत्यल्प ही पाया जाता है। इसके लिए सभी वर्गों, सरकार और शिक्षा-संस्थानों को विशेष प्रयास करने होंगे। विशेष रूप से हिंदी को तकनीक से जोड़कर रोजगार-उन्मुख बनाने की आवश्यकता है। जनता में जब भाषा के प्रति भरोसा जगाने में व्यवस्था सफल हो जाएगी, तब हिंदी की सर्वव्यापकता आसान हो जाएगी। हिंदी को बोलचाल और साहित्य से आगे ले जाने के लिए और तकनीकी क्षेत्र में उसको स्थापित करने के लिए सरल शब्दों में विज्ञान, तकनीकी,कम्प्यूटर आदि क्षेत्रों में हिंदी-प्रयोग की विश्वसनीयता स्थापित करनी होगी। इसके लिए तकनीकी शब्दों की एकरूपता, अधिकाधिक सामग्री, पाठ्यपुस्तकों का हिंदी में निर्माण और जनसामन्य में अध्ययन-अध्यापन में हिंदी के प्रति अभिरुचि और आत्मविश्वास सुदृढ़ होने की आवश्यकता है। भावुकता से ऊपर उठकर व्यावहारिक तौर पर सारे संसाधन और हिंदी में रोजगार की संभावनाओं का वातावरण हिंदी को अन्यान्य क्षेत्रों में आत्मसात करने में सहजता प्रदान कर सकता है।

शुभोदय: आज इंटरनेट पर हर जानकारी उपलब्ध है। इससे साहित्य लेखन और पुस्तकें भी प्रभावित हो रही हैं। क्या आप इंटरनेट को पुस्तकों के लिए एक खतरे के रूप में देखते हैं ?

डॉ. खड़से: इंटरनेट की जानकारियाँ अपनी जगह पर हैं, पर इससे पुस्तकों के प्रकाशन की स्थिति में बहुत अंतर नहीं पड़ा है। पुस्तकों की संख्या हर भाषा में वर्ष-दर-वर्ष बढ़ती जा रही है। वैसे इंटरनेट पर जानकारी का भंडार है, फिर भी पुस्तकों का प्रकाशन आशान्वित करता है।

शुभोदय: क्या आप पुस्तकों के समकालीन प्रकाशन और पाठकों के अनुपात से संतुष्ट हैं?

डॉ. खड़से: पाठकों की संख्या घटी है, क्योंकि पुस्तकों के साथ अन्य साधनों का भी बोलबाला बढ़ गया है। पर आशा करनी चाहिए कि पाठक फिर पुस्तकों की ओर लौटेंगे। पुस्तकों की संख्या बढ़ रही है, पुस्तकों की उपयोगिता और रोचकता पाठक को अपनी ओर आकर्षित करेगी।

शुभोदय: आज मानव जीवन बेहद तनावग्रस्त है। बहुत से लोग अवसादग्रस्त हैं। उससे मुक्ति में साहित्य क्या भूमिका अदा कर सकता है और क्या आज उस प्रकार का साहित्य सृजन हो रहा है?

डॉ. खड़से: आज सचमुच मनुष्य तनावग्रस्त है। सामाजिक, राजनीतिक और विपरीत आर्थिक स्थितियाँ मनुष्य को विसंगति की खाई में धकेल देती हैं। विशेष रूप से बेरोजगारी और

आर्थिक अभाव चिंता का मूल कारण बन जाते हैं। दूसरे, आकांक्षाओं और उपलब्धियों के बीच के बढ़ती खाई भी इसके लिए जिम्मेदार है। विदर्भ के किसानों की आत्महत्याओं के पीछे की अंदरुनी कहानी सदानंद देशमुख के साहित्य अकादमी पुरुस्कृत उपन्यास 'बारोमास' में ऐसे तनावों की जड़ें देखी जा सकती हैं। संजीव के उपन्यास 'फांस' में भी किसानों के जीवन की भग्नाशा को देखा जा सकता है। अमृतकुमार बक्षी ने तनावों से उत्पन्न मानसिक रोगों और उसके निदान पर एक बड़ी पुस्तक लिखी है। कई कविताओं, कहानियों और उपन्यासों में तनाव के स्वरुप और परिणामों पर प्रकाश डाला गया है। साहित्य जीवन को सार्थकता से जीने की प्रेरणा देता है। साहित्य निश्चित रूप से इससे उबरने में मदद कर सकता है। यदि साहित्य में कलात्मकता, रोचकता और व्यवहार्य रूप से सृजन उभरकर आता है, तो वह निश्चित ही मनुष्य को भीतरी ऊर्जा देकर संघर्ष के लिए स्फूर्ति दे सकता है।

शुभोदय: पाश्चात्य जीवन शैली और भौतिकतावाद ने भारतीय जनमानस को प्रभावित किया है। समाज और साहित्य पर आप इसका क्या प्रभाव देखते हैं?

डॉ. खड़से: पाश्चात्य जीवन शैली ने भारतीय जन-समुदाय को अपनी गिरफ्त में ले लिया है। भौतिकतावाद, बाजारवाद एवं उपभोक्तावाद विज्ञापनों पर सवार होकर जन-जन के जीवन में प्रवेश कर चुका है। अपनी हैसियत की सीमाओं को लाँघकर 'उधार लो और घी पियो' के सिद्धांत को अपनाकर कई लोग कर्ज के बोझ तले छटपटाते रहते हैं। परिणामस्वरूप कर्जदार बनकर वे अपना भावी-जीवन या तो गिरवी रखकर अनिद्रा के शिकार हो जाते हैं या भ्रष्टाचार के दलदल में धंसकर 'हाथ मलें या सिर धुनें' का आलाप करते रहते हैं। तमाम विज्ञापन टीवी और अन्य माध्यमों से जनसामान्य को आकर्षित कर उनकी आवश्यकताओं का जबरन आविष्कार करते हैं। साहित्य ने इस प्रक्रिया को बहुत सूक्ष्मता से छुआ है। 'मुझे चाँद चाहिए', 'खिड़कियां'; जैसे उपन्यासों ने इन विषयों को पात्रों के माध्यम से उठाया है। साहित्य और समाज पर पाश्चात्य-जीवन का प्रभाव तो पड़ता ही है, क्योंकि ये दोनों जन-जीवन से जुड़े हुए हैं।

शुभोदय: 'शुभोदय' के पाठकों और नवांकुर कलमकारों को आप क्या संदेश देना चाहेंगे?

डॉ. खड़से: 'शुभोदय' के पाठकों के लिए बहुत-बहुत शुभकामनाएँ ! पाठकों द्वारा ही पत्रिकाएँ ऊर्जा और प्रेरणा पाती हैं। पत्रिका और पाठक का अन्यान्य सम्बन्ध है। 'नवांकुर' भावी जीवन को नई दृष्टि से आकलन कर शब्दबद्ध करते हैं। हर पीढ़ी की अपनी आवश्यकता, प्राथमिकता और आकांक्षा होती है। 'नवांकुर' उन्हें अनुभव कर सृजन करते हैं। आज के 'नवांकुर' भविष्य के सुप्रतिष्ठ साहित्यकार हैं, उनसे बहुत अपेक्षाएँ, उम्मीदें और आशाएँ हैं इसलिए उन्हें अपने लेखन में तटस्थता, ईमानदारी और निष्पक्षता सुनिश्चित करनी चाहिए। साथ ही उन्हें मात्रा से अधिक गुणवत्ता पर ध्यान देना चाहिए।

संपर्क :

डॉ. दामोदर खड़से
बी 503-504, हाई बिलस,
कैलाश जीवन के पास
धायरी, पुणे – 411041
Mob- 9850088496
damodarkhadse@gmail.com

०००

प्रो. महावीर सरन जैन
बुलंदशहर-उत्तर प्रदेश मो. 9971839177

# भारत में भारतीय भाषाओं का विकास एवं सम्मान

राजतंत्र में, प्रशासन की भाषा वह होती है जिसका प्रयोग राजा, महाराजा और रानी, महारानी करते हैं। लोकतंत्र में, 'राजभाषा' शासक और जनता के बीच संवाद की माध्यम होती है। लोकतंत्र में, हमारे नेता चुनावों में जनता से जनता की भाषाओं में जनादेश प्राप्त करते हैं। वे भाषाएँ देश के प्रशासन की माध्यम होनी चाहिए एवं उनको लोक सेवा आयोग की परीक्षाओं का माध्यम भी बनना चाहिए। भारत सरकार ने सिद्धांत के धरातल पर बीसवीं शताब्दी के आठवें दशक में, यह निर्णय ले लिया था जनतंत्र को सार्थक करने के लिए विभिन्न राज्यों में वहाँ की भाषा को तथा संघ के राजकार्य के लिए हिन्दी को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। प्रशासकों को जनता के बीच काम करना है और जनता से संपर्क स्थापित करने के लिए उनकी भाषा का ज्ञान होना अनिवार्य है। भाषा का ज्ञान है अथवा नहीं – इसका पता किस प्रकार चलेगा। लोक सेवा आयोग परीक्षाओं का संचालन किस उद्देश्य से करता है। यह किस प्रकार पता चलेगा कि परीक्षार्थी को जनता की भाषा का समुचित ज्ञान है अथवा नहीं। जब सरकारी अधिकारी बनने की इच्छा रखने वाले परीक्षार्थी लोक सेवा आयोग की परीक्षाएँ जनता के लिए बोधगम्य भाषाओं के माध्यम से देकर परीक्षा पास करेंगे तभी तो उनकी भाषिक दक्षता प्रमाणित होगी। उन भाषाओं के माध्यम से परीक्षा पास करने वाले सक्षम अधिकारी ही तो उन भाषाओं के माध्यम से प्रशासन चला पाएँगे तथा जनता से संवाद स्थापित कर सकेंगे।

लेखक ने सन् 1984 से लेकर सन् 1988 तक यूरोप में एक यूनिवर्सिटी में, विज़िटिंग प्रोफेसर के रूप में कार्य किया। लेखक को यूरोप के 18 देशों में जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यूरोप के सभी उन्नत विश्वविद्यालयों में विदेशी भाषाओं के संकाय हैं। संकाय में लगभग 40 विदेशी भाषाओं को पढ़ने और पढ़ाने की व्यवस्था होती है। विदेशी भाषा का ज्ञान रखना एक बात है, उसको जिंदगी में ओढ़ना अलग बात है। यूरोप के जिन 18 देशों की लेखक ने यात्राएँ कीं, उसने पाया कि 18 देशों में से 17 देशों का सरकारी कामकाज अंग्रेजी में नहीं होता था।

भारत में 28 राज्य एवं 09 संघ शासित क्षेत्र हैं। इन राज्यों का सरकारी कामकाज उस राज्य की राज्यभाषा में होना चाहिए। संघ की राजभाषा हिन्दी है। सह राजभाषा अंग्रेजी है। संघ के राजकाज में सह राजभाषा से अधिक महत्व मुख्य राजभाषा को मिलना चाहिए।

संघ लोक सेवा आयोग की परीक्षाओं में अंग्रेजी की अनिवार्यता बनाए रखने का मतलब क्या है। क्या परीक्षार्थी की अभिक्षमता (एपटीट्यूड) को नापने वाला प्रश्न पत्र मूलतः अंग्रेजी में ही बन सकता है। क्या भारत में ऐसे विद्वान नहीं हैं जो भारतीय भाषाओं में मूल प्रश्न पत्र का निर्माण कर सकें। मूल अंग्रेजी के प्रश्न पत्र का अनुवाद जटिल, कठिन एवं अबोधगम्य हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में कराया जाना क्या जरूरी है। संघ लोक सेवा आयोग चाहता क्या है। क्या उसकी कामना यह है कि देश के प्रशासनिक पदों पर केवल अंग्रेजी

जानने वाले ही पदस्थ होते रहें। परीक्षाओं में प्रश्न पत्र का निर्माण मूल रूप से भारतीय भाषाओं में होना चाहिए। वर्तमान स्थिति में बदलाव जरूरी है। इस साल की परीक्षा में, मूल अंग्रेजी के प्रश्न पत्र का जैसा अनुवाद भारतीय भाषाओं में हुआ है – वह इस बात का प्रमाण है कि लोक सेवा आयोग भारतीय भाषाओं को लेकर कितना गम्भीर है। हमने प्रश्न पत्र का हिन्दी अनुवाद टी. वी. चैनलों पर सुना है। हम कह सकते हैं कि हमारे लिए प्रश्न पत्र की हिन्दी बोधगम्य नहीं है। क्या लोक सेवा आयोग यह चाहता है कि जो अमीर परिवार अपने बच्चों को महँगे अंग्रेजी माध्यम के कॉन्वेन्ट स्कूलों में पढ़ाने की सामर्थ्य रखते हैं, केवल उन अमीर परिवारों के बच्चे ही आईएएस और आईएफएस होते रहें। समाज के निम्न वर्ग के तथा ग्रामीण भारत के करोड़ों करोड़ों किसान, मजदूर, कामगार परिवारों के बच्चे कभी भी यह सपना न देख सकें कि उनका बच्चा भी कभी उन पदों पर आसीन हो सकता है।

भविष्य में, संसार में वे भाषाएँ ही टिक पाएँगी जो भाषिक प्रौद्योगिकी की दृष्टि से इतनी विकसित हो जायेंगी जिससे इन्टरनेट पर काम करने वाले प्रयोक्ताओं के लिए उन भाषाओं में उनके प्रयोजन की सामग्री सुलभ होगी।

सूचना प्रौद्यौगिकी के संदर्भ में भारतीय भाषाओं की प्रगति एवं विकास के लिए, मैं एक बात की ओर विद्वानों का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। व्यापार, तकनीकी और चिकित्सा आदि क्षेत्रों की अधिकांश बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ अपने माल की बिक्री के लिए सम्बंधित सॉफ्टवेयर ग्रीक, अरबी, चीनी सहित संसार की लगभग 30 से अधिक भाषाओं में बनाती हैं मगर वे हिन्दी, बांग्ला, तेलुगु, मराठी, तमिल जैसी भारतीय भाषाओं का पैक नहीं बनाती। मेरे अमेरिकी प्रवास में, कुछ प्रबंधकों ने मुझे इसका कारण यह बताया कि वे यह अनुभव करते हैं कि हमारी कम्पनी को हिन्दी, बांग्ला, तेलुगु, मराठी, तमिल जैसी भारतीय भाषाओं के लिए भाषा पैक की जरूरत नहीं है। हमारे प्रतिनिधि भारतीय ग्राहकों से अंग्रेजी में आराम से बात कर लेते हैं अथवा हमारे भारतीय ग्राहक अंग्रेजी में ही बात करना पसंद करते हैं। उनकी यह बात सुनकर मुझे यह बोध हुआ कि अंग्रेजी के कारण भारतीय भाषाओं में वे भाषा पैक नहीं बन पा रहे हैं जो सहज रूप से बन जाते। हमने अंग्रेजी को इतना ओढ़ लिया है जिसके कारण न केवल हिन्दी का अपितु समस्त भारतीय भाषाओं का अपेक्षित विकास नहीं हो पा रहा है। जो कम्पनी ग्रीक एवं अरबी में सॉफ्टवेयर बना रही हैं वे हिन्दी, बांग्ला, तेलुगु, मराठी, तमिल जैसी भारतीय भाषाओं में सॉफ्टवेयर इस कारण नहीं बनातीं क्योंकि उनके प्रबंधकों को पता है कि उनके भारतीय ग्राहक अंग्रेजी मोह से ग्रसित हैं। इस कारण हिन्दी, बांग्ला, तेलुगु, मराठी, तमिल जैसी भारतीय भाषाओं की भाषिक प्रौद्योगिकी पिछड़ रही है। इस मानसिकता में जिस गति से बदलाव आएगा उसी गति से हमारी भारतीय भाषाओं की भाषिक प्रौद्योगिकी का भी विकास होगा। हिन्दी, बांग्ला, तेलुगु, मराठी, तमिल जैसी भारतीय भाषाओं की सूचना प्रौद्योगिकी के विकास के लिए कम से कम विदेशी कम्पनियों से भारतीय भाषाओं में व्यवहार करने का विकल्प चुने। उनको अपने अंग्रेजी के प्रति मोह का तथा अपने अंग्रेजी के ज्ञान का बोध न कराए। जो प्रतिष्ठान आपसे भाषा का विकल्प चुनने का अवसर प्रदान करते हैं, कम से कम उसमें अपनी भारतीय भाषा का विकल्प चुने। आप अंग्रेजी में दक्षता प्राप्त करें – यह स्वागत योग्य है। आप अंग्रेजी सीखकर, ज्ञानवान बने – यह भी 'वेल्कम' है। मगर जीवन में अंग्रेजी को ओढ़ना बिछाना बंद कर दें। ऐसा करने से आपकी भाषाएँ विकास की दौड़ में पिछड़ रही हैं। भारत में, भारतीय भाषाओं को सम्मान नहीं मिलेगा तो फिर कहाँ मिलेगा। इस पर विचार कीजिए। चिंतन कीजिए। मनन कीजिए।

०००

अरविन्द कुमार 'विदेह'
लखनऊ-उत्तर प्रदेश मो. 7408403570

# भाषा को भूतनी न बनने दें

महाभारत एक बहुत विशाल ग्रंथ है; और यदि उसमें खिलभाग – हरिवंश पुराण – को भी शामिल कर लिया जाए तो और भी विशालकाय हो जाता है। किंतु कितने लोग जानते हैं कि उसका सारांश महर्षि वेदव्यास ने स्वयं ही ग्रंथ के 'स्वर्गारोहण पर्व' में 'भारत-सावित्री' के रूप में वर्णित कर दिया है। नीचे मैं उसी 'भारत-सावित्री' को अविकल रूप से प्रस्तुत कर रहा हूँ। यह रचना मेरी नहीं, मैंने तो इसे लोक-कल्याण की भावना से प्रस्तुत किया है ताकि लोक-मानस में यह महत्वपूर्ण ग्रंथ कुछ प्रवेश पा सके।

य इमाम् संहिताम् पुण्याम् पुत्रमध्यापयच्छुकम्

(जिन भगवान वेदव्यास ने इस पवित्र संहिता को प्रकट करके अपने पुत्र शुकदेवजी को पढ़ाया था वे इस महाभारत के सारभूत उपदेश का इस प्रकार वर्णन करते हैं:)

मातापितृसहस्राणि पुत्रदारशतानि च
संसारेष्वनुभूतानि यान्ति यास्यन्ति चापरे

(मनुष्य इस जगत में हज़ारों माता-पिताओं तथा सैकड़ों स्त्री-पुत्रों के संयोग-वियोग का अनुभव कर चुके हैं, करते हैं और करते रहेंगे।)

हर्षस्थानसहस्राणि भयस्थानशतानि च
दिवसे दिवसे मूढ़मावि‍शंति न पण्डितम्

(अज्ञानी व्यक्ति के लिए प्रतिदिन हर्ष के हज़ारों और भय के सैकड़ों अवसर उत्पन्न होते हैं; किंतु विद्वान व्यक्ति के मन पर उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ता।)

ऊर्ध्वबाहुर्विरौम्येष न च कश्चिच्छृणोति मे
धर्मादर्थश्च कामश्च स किमर्थम् न सेव्यते

(मैं दोनों हाथ ऊपर उठाकर पुकार-पुकार कर कह रहा हूँ, परन्तु मेरी बात कोई नहीं सुनता! धर्म से मोक्ष तो सिद्ध होता ही है, अर्थ और काम भी सिद्ध होते हैं; तो भी लोग उसका धारण क्यों नहीं करते!)

न जातु कामान्न भयान्न लोभाद्
धर्मम् त्यजेज्जीवितस्यापि हेतो:

(कामना से, भय से, लोभ से अथवा प्राण बचाने के लिए भी धर्म का त्याग नहीं करना चाहिए।)

नित्यो धर्म: सुखदु:खे त्वनित्ये
जीवो नित्यो हेतुरस्य त्वनित्य:

(धर्म नित्य है और सुख-दु:ख अनित्य; इसी प्रकार जीवात्मा नित्य है और उसके बंधन का हेतु अनित्य।)

इमाम् भारत सवित्रीम् प्रातरुत्थाय य: पठेत्
स भारतफलम् प्राप्य परम् ब्रह्माधिगच्छति

(यह महाभारत का सारभूत उपदेश 'भारत-सावित्री' के नाम से प्रसिद्ध है। जो व्यक्ति प्रतिदिन सवेरे उठकर इसका पाठ व अनुशीलन करता है वह संपूर्ण महाभारत के अध्ययन का फल पाकर परब्रह्म परमात्मा को प्राप्त कर लेता है।)

(महाभारत स्वर्गारोहण पर्व से)

०००

डॉ. योगेन्द्र दत्त शर्मा
गाजियाबाद-उत्तर प्रदेश मो. 9311953571

# गागर में सागर-सा पानी

साहित्य-जगत में प्रगतिशील कवि के तौर पर शैलेन्द्र की पहचान किसी भी रूप में कम नहीं है। इसके बावजूद जन साधारण के बीच उनकी ख्याति फिल्मी गीतकार के तौर पर कहीं अधिक है। फिल्मों के लिए लिखे गये उनके गीतों के कारण उनकी एक विशिष्ट पहचान बनी और वह जन-जन के बीच लोकप्रिय हुए।

शैलेन्द्र में अद्‌भुत सर्जनात्मक प्रतिभा थी। कथा के पात्र, विषय और परिस्थितियों की सारी विशेषताएं बहुत कम शब्दों में समेट लेने में वह सिद्धहस्त थे। साहित्यिक भाषा पर उनका पूरा अधिकार था ही, ब्रज और भोजपुरी भाषाओं में भी वह पारंगत थे। इसके अलावा वह हिन्दी कविता की समृद्ध सांस्कृतिक परंपरा के भी समर्थ वाहक थे। आम बोलचाल की भाषा और लोक संस्कृति में भी उनकी गहरी पैठ थी। रेखांकनीय बात यह है कि उनके फिल्मी गीतों में दार्शनिकता का पुट भी मिल जाता है।

शैलेन्द्र ने फिल्मी गीतों में क्रांति का सूत्रपात किया। फिल्मों में उनके पदार्पण से पहले ठेठ उर्दू का बोलबाला था। उन्होंने सहज, सरल हिन्दी का एक नया मुहावरा विकसित किया, जो आम लोगों की जबान पर चढ़ सके। यही कारण है कि हिन्दी के साथ-साथ भोजपुरी फिल्मों में भी उनके लिखे गीत अत्यंत लोकप्रिय हुए। इस मामले में जनता के बीच जाकर उसकी ही भाषा में कविताएं लिखकर सुनाने का उनका अनुभव बहुत काम आया। भाषा की संप्रेषणीयता पर उनकी पकड़ मजबूत हुई।

फिल्मों में आने से पहले शैलेन्द्र के पास सुदृढ़ और सशक्त साहित्यिक पृष्ठभूमि थी। वह मेधावी और प्रतिभाशाली भी थे। साथ ही त्वरित-बुद्धि थे और आशुकविता रच देने में उन्हें महारत भी हासिल थी। तब उनके इर्द-गिर्द देश-प्रेम, श्रमिकों का शोषण, गरीबी, भूख, बेकारी, बेरोजगारी और नवनिर्माण की समस्याएं थीं। भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए उनके सामने एक सीमित रचना-फलक था। पर फिल्मों में प्रवेश के साथ ही इस फलक का विस्तार होता गया। नये-नये चरित्र, नये-नये कथानक, नई-नई कथा-स्थितियों के साथ-साथ अलग-अलग संगीतकारों से संपर्क, उनकी बनाई धुनों पर गीत-लेखन की निर्विकल्पता ने उनके सामने संभावनाओं के नये क्षितिज उपस्थित कर दिये। इन नये अवसरों और संभावनाओं ने शैलेन्द्र की सर्जनात्मक क्षमता को शान पर चढ़ाया और उनकी प्रतिभा निखरती चली गई। उनके गीतों में भी बहुआयामिता आती गई।

शैलेन्द्र के गीतों के शब्द ऊपरी तौर पर भले ही सीधे, सरल लगते हों, लेकिन वे गहरा अर्थ लिये होते हैं। कई बार तो उनकी अर्थ-भंगिमाएं भी बहुआयामी होती है। कहीं-कहीं वह दो परस्पर-विरोधी पदबंधों के माध्यम से उलटबांसी का चमत्कार पैदा करते हैं। 'मधुमती' फिल्म का गीत – 'मैं नदिया फिर भी मैं प्यासी/ भेद ये गहरा बात जरा-सी!' इसी तरह 'गाइड'

फिल्म में – 'आज फिर जीने की तमन्ना है /आज फिर मरने का इरादा है!' इसकी उदाहरण हैं।

इस तरह की उक्तियां गहरे अंतर्द्वंद्व का परिणाम होती हैं। 'गाइड' की नायिका रोज़ी नृत्यांगना है। वह अपने पुरातत्ववेत्ता पति मार्को की उपेक्षा की घुटन से त्रस्त है और बाहर निकलने के लिए बेचैन है। फिल्म का नायक राजू गाइड उसे पायल लाकर देता है। वह उमंगों से भर जाती है और अपनी गृहस्थी को दांव पर लगाकर घुटन की बेड़ियां तोड़ देने के लिए व्याकुल हो उठती है। इसी अंतर्द्वंद्व की भावाभिव्यक्ति हैं ये पंक्तियां।

इस संदर्भ में एक उल्लेखनीय प्रसंग है। 'गाइड' के गीत पहले हसरत जयपुरी से लिखवाये जा रहे थे। उक्त सिचुएशन पर उन्होंने जो गीत लिखा, वह निर्देशक विजय आनंद को पसंद नहीं आया। इस पर हसरत जयपुरी कुछ झल्लाकर बोले– "एक नाचने वाली तवायफ के लिए मैं और क्या लिखूं?" इस पर विजय आनंद ने कहा कि अगर रोज़ी को आपने इतना ही समझा है, तो रहने दीजिये। हम किसी और से लिखवा लेंगे !" इसके बाद गीत लिखने का काम शैलेन्द्र को सौंपा गया।....गीत में रोज़ी के अंतर्द्वंद्व और मुक्ति के अहसास की शुरुआत ही इन पंक्तियों से होती है– 'कांटों से खींच के ये आंचल / तोड़ के बंधन बांधी पायल / कोई न रोको दिल की उड़ान को / दिल वो चला / आ हा हा ...!'

'गाइड' फिल्म के गीत एक से बढ़कर एक हैं। इसकी सफलता में इसके गीतों की बहुत बड़ी भूमिका थी। ये गीत फिल्म की कहानी को आगे बढ़ाने में ही सहायक नहीं हैं, बल्कि उसे एक बहुत ऊंचे धरातल पर पहुंचा देते हैं। अपनी गहनता और सघनता के बल पर ये सामान्य-से कथानक को दार्शनिक आयाम प्रदान कर देते हैं। 'गाता रहे मेरा दिल/ तू ही मेरी मंजिल', 'पिया तोसे नैना लागे रे / जाने क्या हो अब आगे रे', 'दिन ढल जाये हाए रात न जाये/ तू तो न आये तेरी याद सताये', 'क्या से क्या हो गया/ बेवफा, तेरे प्यार में', 'वहां कौन है तेरा / मुसाफिर जायेगा कहां' जैसे गीत साधारण की श्रेणी में नहीं आते।

'दिन ढल जाये...' गीत के अंतरे में पंक्तियां आती हैं– 'तेरे- मेरे दिल के बीच अब तो सदियों के फासले हैं / यकीन होगा किसे कि हम-तुम इक राह संग चले हैं !' इस तरह की अभिव्यक्ति अन्यत्र दुर्लभ है।

'गाइड' फिल्म की शुरुआत राजू गाइड के जेल से छूटने के दृश्य से होती है। उसके पास प्रेम और परिवार से मिले तिक्त अनुभवों का ढेर है। प्रश्न यह है कि जेल से छूटकर वह जाये कहां ! उसका परिसर और परिवेश ही अब उसका नहीं रहा। दृश्यों के पार्श्व में सचिन देव बर्मन का गाया गीत चल रहा है –

'वहां कौन है तेरा/ मुसाफ़िर जायेगा कहां !
दम ले ले घड़ी-भर / ये छैंया पायेगा कहां !...

इस तरह की दार्शनिक अभिव्यक्ति विरल ही कही जायेगी। आमतौर पर फिल्मों में यह सब नहीं होता। यह शैलेन्द्र की ही सामर्थ्य है कि वह सामान्य संदर्भों को ऊर्ध्व धरातल पर पहुंचा देते हैं।

शैलेन्द्र का कवि-व्यक्तित्व अत्यंत असाधारण था। यह असाधारणता उनके फिल्मी कैरियर के आरंभ में ही नजर आने लगती है। 'आवारा हूं... गर्दिश में हूं, आसमान का तारा हूं' लिखकर जैसे वह अपनी साधारणता में भी असाधारणता की घोषणा ही कर डालते हैं। यही ठसक उनके 'श्री 420' के इस गीत में भी दिखाई देती है –

'मेरा जूता है जापानी
ये पतलून इंगलिस्तानी
सिर पे लाल टोपी रूसी
फिर भी दिल है हिन्दुस्तानी!

अपने गीतों में शैलेन्द्र ने नये-नये भावों और नई -नई कल्पनाओं के जरिये नये-नये प्रयोग किये और फिल्मी गीत -विधा को समृद्ध किया। उदाहरण के लिए

फिल्म 'दिल एक मंदिर' की ये पंक्तियां देखें हैं –

'दिन जो पखेरू होते
पिंजरे में मैं रख लेता
पालता उनको जतन से
मोती के दाने देता ....
सीने से रहता लगाये !'

इसी तरह का एक प्रयोग शैलेन्द्र ने फिल्म 'आम्रपाली' में भी किया है–' नील गगन की छांव में/ दिन, रैन गले से मिलते हैं/ दिन पंछी बन उड़ जाता है/ हम खोये-खोये रहते हैं !' 'आम्रपाली' में ही उलटबांसी का एक प्रयोग देखिये–

'ज्ञान की कैसी सीमा ज्ञानी
गागर में सागर-सा पानी !'

यह पूरा ही गीत दार्शनिकता से भरा हुआ है –

'जाओ रे, जोगी तुम जाओ रे !
ये है प्रेमियों की नगरी, यहां प्रेम ही है पूजा !
जाओ रे ...
प्रेम की पीड़ा सच्चा सुख है
प्रेम बिना ये जीवन दुख है ! ...जाओ रे ...
जीवन से कैसा छुटकारा
है नदिया के साथ किनारा ! ...जाओ रे ...
ज्ञान की कैसी सीमा ज्ञानी
गागर में सागर का पानी ! ...जाओ रे ...

'अनाड़ी' फिल्म के प्रसिद्ध गीत 'सब कुछ सीखा हमने...' की एक पंक्ति में एक उलटबांसी इस तरह है – 'हमने हर जीने वाले को/ धन-दौलत पे मरते देखा !'

उलटबांसी का आधार कथनवक्रता है। इसमें बात को सीधे-सीधे न कहकर कुछ टेढ़े ढंग से कहा जाता है। कई बार दुनिया के रंग-ढंग ही टेढ़े नजर आने लगते हैं। फिल्म 'मुसाफिर' में बाल-मानसिकता के प्रसंग में शैलेन्द्र की कल्पना देखिए –

'मुन्ना बड़ा प्यारा, अम्मी का दुलारा
कोई कहे चांद, कोई आंख का तारा !
हंसे तो भला लगे, रोये तो भला लगे
अम्मी को उसके बिना कुछ भी न अच्छा लगे

इसी तरह की एक और अनोखी कल्पना 'उजाला' फिल्म के एक गीत में सुनने को मिल जाती है –

'सूरज, जरा आ, पास आ
आज सपनों की रोटी पकायेंगे हम
ऐ आसमां, तू बड़ा मेहरबां
आज तुझको भी दावत खिलायेंगे हम !...

फिल्म 'ब्रह्मचारी' में शैलेन्द्र की लिखी एक लोरी का निराला अंदाज देखने लायक है –

'मैं गाऊं, तुम सो जाओ !
सुख सपनों में खो जाओ
मैं गाऊं, तुम सो जाओ ! ...

शैलेन्द्र ने फिल्मी गीतों में अनेक रोचक प्रयोग किये हैं। इन गीतों में अद्‌भुत कल्पनाशीलता है। लेकिन ये प्रयोग भी वायवीय अथवा आकाशीय नहीं हैं। ये जन -सरोकारों और जनाकांक्षाओं से संचालित हैं। ध्यान देने लायक बात यह है कि शैलेन्द्र के लिखे फिल्मी गीतों में कल्पना-तत्व, प्रयोगशीलता, सांकेतिकता, लाक्षणिकता, सूत्रात्मकता, व्यंजनापरकता और काव्यात्मकता का एक अनोखा संगम देखने को मिलता है। यह देखना दिलचस्प है कि ये विशेषताएं उनकी साहित्यिक कविताओं में उस मात्रा में नजर नहीं आतीं। इसका कारण संभवतः यह भी रहा होगा कि उम्र के साथ-साथ उनकी सर्जनात्मक क्षमता अधिक प्रखर और प्रौढ़ होती गई। कम शब्दों में बड़ी बात कह देने का कौशल तो उनमें था ही, जिसके बारे में स्वयं उनके ही शब्दों में कहा जा सकता है– 'ज्ञान की कैसी सीमा ज्ञानी ! / गागर में सागर-सा पानी !!'

०००

पीयूष त्रिपाठी
गुलावठी, बुलंदशहर (उ0प्र0) मो. 9839174687

# हेल्दी अनहेल्दी

चावल हेल्दी है या अनहेल्दी?

-हेल्दी

दाल?

-हेल्दी

रोटी?

-हेल्दी

मोमोज?

-अनहेल्दी

पिज्जा?

-अनहेल्दी

बर्गर?

-अनहेल्दी

डोसा?

-हेल्दी

सात साल का बच्चा यह मान कर चलता है कि उसके पापा को इन सवालों का जवाब पता ही होगा। 'हेल्दी' और 'अनहेल्दी' फूड के बारे में उसका ताजा ताजा ज्ञान यूट्यूब से सीखा गया है। सरल सवाल पूछने के बाद वह अपने सवालों का स्तर बढ़ाता है।

हेल्दी खाने से क्या होता है?

-शरीर हेल्दी रहता है।

शरीर हेल्दी होने से क्या होता है?

-शरीर हेल्दी होने से दिमाग भी हेल्दी रहता है।

दिमाग हेल्दी होने से क्या होता है?

-हम एक्टिव बने रहते हैं।

एक्टिव बनकर हम क्या करते हैं?

-हम अपनी मनपसंद की चीजें कर सकते हैं; जैसे -खेलना, पढ़ाई करना, घूमना वगैरह।

तो एक्टिव बनने के लिए हमें क्या करें?

-हमें हेल्दी खाना खाना चाहिए।

दूसरे दौर के प्रश्नों के वर्तुल का संतोषजनक जवाब देने के बाद मैं क्षणिक जीत का अनुभव कर रहा था; तभी बाल सुलभ चंचलता लिए उसने फिर से पूछ लिया कि बताइए समोसा हेल्दी है कि अनहेल्दी? इसके पहले कि इसका कोई सटीक जवाब सोच पाता वह दूसरा सवाल छोले भटूरे के बारे में दाग देता है। इसी तरह वह रसगुल्ला, खस्ता, जलेबी और रसमलाई के बारे में भी सवाल पूछता है। मैं टालने के उद्देश्य से कहता हूँ कि ये सब चीजें अगर महीने में एक आध बार खाई जाएं तो हेल्दी वरना अनहेल्दी।

शुरुआती दौर में हेल्दी और अनहेल्दी के बारे में जिज्ञासाओं का समाधान करने वाली उसकी मम्मा के बारे में बच्चे को लगता है कि वह जरूर ही हेल्दी फूड खाती होंगी। फिर भी वह अपनी शंका मिटाने और मेरा ज्ञान चेक करने के लिए पूछता है कि आइसक्रीम, चॉकलेट या कोल्ड ड्रिंक में क्या हेल्दी है और क्या अनहेल्दी? मैं जब उन्हें अनहेल्दी बताता हूँ, तो वह मुझसे अपना उत्तर सुधारने का अनुरोध करता है। जब मैं इन्हें दृढ़ता से अनहेल्दी बताता हूँ तब उसका दर्द छलक पड़ता है। अकिंचन भाव से वह मुझसे शिकायत करता है- "मम्मा ने आज ही आइसक्रीम खाई है और मेरी चॉकलेट अनहेल्दी बताकर दिलाने से मना कर दिया।" मैं उसके मम्मा की तरफदारी करते हुए कहता हूँ कि मम्मा महीने में केवल एक बार ही आइसक्रीम खाती है। इस पर वह मुझे टोंकते हुए कहता है "मम्मा जब भी बाजार जाती है तो आइसक्रीम जरूर खाती है और चॉकलेट को अनहेल्दी बताकर नहीं दिलाती।"

मैं उसके क्षोभ को कम करने के उद्देश्य से कहता

हूँ कि मम्मा की इम्युनिटी विकसित हो चुकी है। उन्हें ये चीजें ज्यादा नुकसान नहीं पहुँचाएंगी, लेकिन तुम्हें इम्युनिटी विकसित होने तक अनहेल्दी चीजें खाने से बचने की जरूरत है।

"कब तक? जब मैं भी बड़ा हो जाऊँगा तो खाने लगूँगा?" उसने बड़ी उम्मीद से यह सवाल किया।

"हाँ, खा सकते हो। बड़े होकर जो खाना हो, खाना।" मैंने उसका मन रखने के लिए जवाब दिया।

बच्चे के सवालों के तो गोलमोल जवाब दिये जा सकते हैं, लेकिन अपने मन में भी अगर वही सवाल उठें तो उसका उत्तर खोजना कठिन हो जाता है। मैं कोई आहार और पोषण विशेषज्ञ तो हूँ नहीं, इसलिए इन प्रश्नों का उत्तर खोजने के लिए आज के सबसे बड़े ज्ञानी गूगल बाबा और यूट्यूब की शरण में चला जाता हूँ।

गूगल और यूट्यूब पर हर विषय का असीमित ज्ञान उपलब्ध है। सांगोपांग प्रस्तुतिकरण व ग्राफिक्स और पूरी प्रामाणिकता के दावे के साथ। परंतु मुझ जैसे व्यस्त आदमी के पास इतना समय ही कहाँ है कि इस तरह के वीडियो पूरा देख सकूँ। शायद मेरे जैसे बिजी लोगों की इसी आवश्यकता को ध्यान में रखकर ही 'शॉट्‌र्स' या 'रील' का अविष्कार किया गया है।

शॉट्‌र्स अर्थात ज्ञान की संघनित अवस्था। जो ज्ञान एमबीबीएस करने के बाद प्राप्त होता है, जो निष्कर्ष निकालने के लिए पीएचडी में कई साल बर्बाद किए जाते हैं, जिन सत्यों की प्राप्ति के लिए कई सालों तक तपस्या करनी पड़ती है, वही सारा ज्ञान बस एक मिनट के शॉट्‌र्स में ही मिल जाता है। शॉट्‌र्स या रील देखकर जो आनंद आता है उसके कहने ही क्या? आखिर 'इंस्टैंट ग्रेटिफिकेशन' भी कोई चीज होती है।

क्या हेल्दी है और क्या अनहेल्दी? इस बारे में मैं शॉट्‌र्स या रील से जानकारी जुटाने का प्रयास करता हूँ। हेल्दी और अनहेल्दी के पैकेज के साथ हेल्थ और फिटनेस के वीडियोज भी मिल जाते हैं। थोड़ा बहुत ज्ञानवर्धन इससे भी हो जाता है। बारी बारी से ये रील या शॉट्‌र्स देखना शुरू करता हूँ।

एक रील में स्वस्थ रहने के लिए खूब पानी पीने की सलाह दी जाती है; तो दूसरे में बताया जाता है कि ज्यादा पानी पीने से नेफ्रोंस पर जोर पड़ेगा। एक वीडियो में घी को हेल्दी बताया जाता है तो दूसरे में अनहेल्दी। कोई बताता है कि हर दो घंटे में कुछ न कुछ खाते रहना चाहिए। इससे शरीर का 'मेटाबॉलिज्म' अच्छा रहता है तो दूसरी रील में कोई लगातार खाने के सिद्धांत का खंडन करते हुए 'इंटरमिटेंट फास्टिंग' के फायदे समझाता है।

एक शॉट्‌र्स कहता है कि तेल मसाले वाला खाना नुकसान करता है तो दूसरा कहता है कि मसाले तो वरदान हैं। भारत में ही तो इतने बढ़िया मसाले पाए जाते हैं और शरीर में चिकनाई की कमी होगी तो चेहरे पर तेज कैसे दिखेगा? एक ज्ञानवर्धक रील में बताया जाता है कि हरी पत्तेदार सब्जियों में विटामिन भरपूर मात्रा में होता है और इसे अपने खाने में जरूर शामिल करें। दूसरा कहता है कि पत्तेदार सब्जियों में छोटे-छोटे कीड़े छिपे होते हैं। ये पेट के रास्ते दिमाग तक पहुँच कर पूरे शरीर को नुकसान पहुँचा सकते हैं। हेल्थ और फिटनेस पर इस तरह के और भी कई सारे वीडियो देख कर अपना ज्ञान बढ़ा डालता हूँ।

ज्यादा ज्ञान अनिर्णय की स्थिति में ला देता है। किंकर्तव्यविमूढ़ता की स्थिति में अचानक एक वीडियो में दिखाई पड़ता है कि खाने का सबसे बड़ा नियम यह है कि इसे बिना अपराधबोध के खाना चाहिए। मुझे यह विचार पसंद आता है। बाद में इसी आशय के कुछ और वीडियो देख डालता हूँ।

सम्यक विचार विमर्श के बाद अब मैं अनेकांतवाद पर आधारित यह धारणा बनाता हूँ कि सब कुछ हेल्दी है और सब कुछ अनहेल्दी। यह परिस्थितियों पर निर्भर करता है कि कब किस खाने को हेल्दी कहा जाएगा और कब किस खाने को अनहेल्दी। रील प्राप्त ज्ञान से बोझिल होने के बाद मैं अपने आपको को छोटा मोटा आहार और पोषण विशेषज्ञ समझने लगता हूँ। इतवार की सुबह ही बच्चे को रसगुल्ले, चॉकलेट, टिकिया और समोसे लाकर देता हूँ। वह प्रश्नवाचक नजरों से मुझे देखता है। मैं मुस्कुराकर कहता हूँ- "खाओ मेरे बच्चे। प्यार से खाओ, चाव से खाओ, अच्छा लगेगा, हेल्थ बनेगा।"

खुशी व्यक्त करने और धन्यवाद देने की नीयत से वह एक रसगुल्ला मेरी ओर बढ़ाता है। हम दोनों उसे चाव से खाते हैं।

ooo

मंजु सिंह
नोएडा-उत्तर प्रदेश मो. 9891790176

# पारिवारिक एकता व मूल्यों का संकटमान

संयुक्त परिवार प्रणाली पारिवारिक जीवन शैली की एक विशिष्ट जीवन पद्धति और हमारी प्राचीन भारतीय संस्कृति की द्योतक है। परिवारों से मिलकर ही एक समाज का और अच्छे समाज से एक सुदृढ़ देश का निर्माण होता है। परिवार के सभी सदस्य स्वस्थ व खुशहाल तभी होते हैं जब वे सम्मान, विश्वास व प्रेमभाव से आपस में मिलजुल कर रहें और सुख-दुख में व जरूरत के समय एक दूसरे के काम आयें। परिवार एक वृक्ष की तरह होता है, जिसके साये में बच्चे परिवार के सदस्यों के साथ रहकर बहुत-सी मूल्यवान बातें सीखते हैं। बड़ों के अनुभव उन्हें जीवन को सामंजस्यता के साथ जीना सिखाते हैं जो शायद एकल परिवारों में इतने प्रभावी रूप में दिखने को नहीं मिलता। परिवार की एकजुटता ही हमें हर संकट व कठिन परिस्थितियों का सामना करने का साहस और कौशल प्रदान करती है।

भारतीय संयुक्त परिवार प्रणाली घर के बुजुर्ग के नियन्त्रण में या कहें परिवार को बरगद की छाया में रखकर अपनी भावी पीढ़ी में संस्कार, जीवन आदर्श और मूल्यों को निर्मित व हस्तांतरित कर उसे आदर्श, उदार, सहिष्णु, सेवा, सहयोग, प्रेम, सद्भाव, आज्ञाकारिता और स्वार्थहीन बनाती है। एक परिवार बच्चे के जन्म व बड़े होने तक नैतिक विकास और मूल्यों की नींव गढ़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। बच्चे पारिवारिक परिवेश में सब कुछ सीखते हैं, बढ़ते हैं और उन्नति की राह पर चलने की आदत को भी स्वाभाविक रूप से विकसित कर लेते हैं। यही मूल्य भविष्य में प्रत्येक व्यक्ति का उसके कार्यों और जीवन के सभी निर्णयों में मार्गदर्शन भी करते हैं। पारिवारिक मूल्य समाज को एक डोर में बांधने का काम करते हैं और नैतिक मूल्य कार्य करने के लिए दिशा प्रदान करते हैं। हमारी परंपराएँ व संस्कृतियाँ सभी देशों से महान हैं क्योंकि वे मानवता को पोषित करती हैं।

किन्तु आज कल कुछ कारणों से हमारे समाज में धीरे-धीरे पारिवारिक एकता और मूल्यों का अवमूल्यन होता नजर आ रहा है। समय के साथ संयुक्त परिवार कहीं न कहीं विघटित होते जा रहें है जो एक चिंता का विषय है। इसके कई मुख्य कारण हैं। आज के समय में लोग अपनी दौड़-भाग भरी जिंदगी में अति व्यस्तता के कारण घर में पर्याप्त समय नहीं दे पाते जिसके कारण घर और बच्चों के जीवन पर असर पड़ता है। नौकरी या आय के अन्य स्रोत आदि के कारण एक जगह से दूसरी जगह पलायन कर रहे हैं जिससे संयुक्त परिवार, मूल परिवारों में परिवर्तित हो जाते हैं और कुछ परिवारों में घर के बुजुर्ग ही अकेले रह जाते हैं। हमारी संयुक्त परिवार की अवधारणा अब एकल परिवार में बदलती जा रही है। इसे भी आज की पीढ़ी में नैतिक मूल्यों के विघटन का एक कारण मान सकते हैं। वैवाहिक परंपराओं में होता परिवर्तन, रिश्तों के बदलते स्वरूप,

नयी पीढ़ी का विवाह को एक समझौता मानना, विवाह विच्छेद, प्रेम या श्रद्धा – की भावना के स्थान पर भौतिकता की भावना, स्वार्थ परक भावना के साथ कार्य करना आदि वे प्रभाव है जो आज समाज में स्पष्ट रूप से परिलक्षित हो रहे हैं। इस का प्रभाव नई पीढ़ी के मनोवैज्ञानिक रूप से अस्थिर कर देता है जिससे अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं। पुरानी पीढ़ी भी पारिवारिक विघटन के लिए काफी सीमा तक जिम्मेदार है। माता-पिता भी परिवर्तित मानव मूल्यों व सिद्धान्तों के साथ समझौता करने की तैयार नहीं होते। समय बदल रहा है जिससे आधुनिक समाज में बदलाव भी होगा। बदलाव होना प्रकृति का नियम भी है जिसके चलते उन्हें भी समय के साथ बदलने की आवश्यकता है।

आज दुनिया में संपर्क बढ़ रहा है, व्यक्तिगत स्वतंत्रता, खुली हवा में सांस लेने, ग्लोबल विलेज आदि की बात हो रही है, परंतु इस अंधाधुंध की दौड़ में पारिवारिक व व्यक्तिगत आवश्यकताओं के बढ़ने के फलस्वरूप अर्थोपार्जन हेतु कार्य भार स्त्री और पुरुष दोनों पर ही पड़ने से मानसिक असन्तोष, तनाव, जीवन में असमंजस्यता, सामाजिक आदर्शों और मूल्यों में असंगत विविधता, पारिवारिक जीवन में अलगाववाद, और व्यक्तिगत व पारिवारिक संबंधों में अशिथिलता भी बढ़ रही है। इन समस्याओं के कारण तलाक में वृद्धि, बच्चों की मानसिक प्रवृतियों में बदलाव, अमानविक प्रवृति का प्रभाव भावी पीढ़ी पर पड़ रहा है जो आने वाले कल के लिए घातक सिद्ध हो रहा है।

उभरते तथ्यों को देखने पर ऐसा लगता है कि परम्परागत परिवारों का भविष्य खतरे में पड़ता जा रहा है। परिवार संस्था के कमजोर होने को किसी को लाभ नहीं हो रहा है। जीवन मूल्यों को बचाए रखने के लिए परिवार संस्था को मजबूत किए जाने की आवश्यकता है जिसके लिए सभी को अपने-अपने स्तर पर कदम उठाने की आवश्यकता है। हमें अपनी प्राचीन अवधारणा को पुन: अपनाना होगा तभी समाज सुदृढ़ होगा। विभिन्न धर्मों, जातियों व क्षेत्रों के लोगों के साथ संपर्क से धैर्य, सहिष्णुता जैसे मूल्यों को विकसित करना आसान होता है। संस्कृत में कहा भी गया है "वसुधैव कुटुंबकम" अर्थात "दुनिया एक परिवार है।"

जिसका अर्थ है कि पृथ्वी पर हर कोई अपने परिवार के सदस्य की तरह है। इसी प्रकार हमें अपने परिवार में भी एक-दूसरे के साथ दयालुता, सम्मान और समझ के साथ व्यवहार करने की आवश्यकता है। हमें अपने परिवारों का स्वरूप इस प्रकार परिवर्तित करना होगा कि उसका प्रत्येक सदस्य परिवर में अपनी उन्नति और स्वतंत्रता को सुरक्षित समझे तभी परिवार का आदर्श स्वरूप स्थापित हो पाएगा और जीवन मूल्य सुरक्षित रह पाएंगे। जीवन मूल्य सामाजिक जीवन को श्रेष्ठ बनाने के लिये आवश्यक हैं। मानवीय एवं नैतिक जीवन मूल्यों से रहित व्यक्ति इस दुनिया में किसी पशु के समान होता है। जीवन मूल्य ही किसी श्रेष्ठ व्यक्ति, राष्ट्र और समाज के चरित्र का निर्माण करते हैं।

ooo

सुरेश चंद शर्मा
फरीदाबाद-हरियाणा मो. 9953091619

# महाकवि कवि–संत गंगादास

महात्मा गांधी ने कहा था कि "भारत की आत्मा गांव में बसती है"। भारत गांवों का देश है क्योंकि देश की एक तिहाई जनसंख्या गांव में निवास करती है। इस बड़ी जनसंख्या में लाखों प्रतिभाएं जन्म लेती हैं किन्तु न्यूनतम सुविधाओं के साथ शिक्षा के स्तर के बावजूद कठिन तपस्या से अर्जित ज्ञान और उन्नति के सीमित वातावरण के साथ पलने के कारण उन्हें अपनी प्रतिभा के प्रदर्शन तथा उसके अनुरूप राष्ट्रीय अथवा अंतर्राष्ट्रीय पटल पर प्रायः उतना मान–सम्मान कभी कभार ही मिल पाता है जिसके वे अधिकारी होते हैं।

ऐसी ही एक विलक्षण प्रतिभा का जन्म 14 फरवरी 1823 (बसंत पंचमी) को जिला हापुड़ के अंतर्गत गंगा तट पर बसे प्राचीन तीर्थ गढ़मुक्तेश्वर (उ.प्र.) के पास रसूलपुर ग्राम, जो मेरा भी जन्मस्थान है, में एक सम्पन्न जाट परिवार में हुआ था। इनका बचपन का नाम गंगाबख्श था और मात्र 11 वर्ष की अल्पायु में ही सन्यासी जीवन अपनाने वाले गंगाबख्श ने संत विष्णु दास के आदेश पर काशी में लगभग 20 वर्ष तक वैदिक संस्कृत साहित्य का अध्ययन किया और कठोर साधना की तथा संत गंगादास कहलाए। भारतीय संस्कृति और अध्यात्म में गहन रूचि होने के कारण मेरा यह परम सौभाग्य रहा कि मेरे बाल्यकाल में मेरे दादाजी पंडित प्रीतम दत्त शर्मा के मुख से संत गंगादास की अनेक कृतियों जैसे होली पूरणमल, होली राजा हरिश्चन्द्र, महाभारत, निर्गुण भक्ति से ओत-प्रोत पद, जो उन्हीं के द्वारा संगीतबद्ध होते थे,यदा कदा मुझे सुनने को मिल जाते थे। जब मैं सात साल का रहा होऊँगा उस समय की मेरी धुंधली सी स्मृति में आज भी कवि की अपने हस्तलिपि में (अथवा सम्भव है कि उनके शिष्यों द्वारा तत्कालीन बांस की कलम से लिखा गया होगा) लिखित पांडुलिपियों में संकलित कुछेक पन्ने मौजूद हैं जिन्हें मेरे दादाजी ने अपने हाथों से आदरणीय डॉ जगन्नाथ शर्मा 'हंस' को संत गंगादास पर शोध करने के लिए सौंपा था। मेरे दादाजी भजनोपदेशक एवं कवि थे और अपनी भजन मंडली के साथ उस समय के जमीदारों, धनाड्यों के घर किसी उत्सव अथवा त्यौहारों पर संत गंगादास तथा पंडित चेतराम, खरखौदा के निकट पानची ग्राम के निवासी कवि मोहनलाल की रचनाओं को मेरठ ,बिजनौर, मुरादाबाद, गाज़ियाबाद तथा बुलन्दशहर आदि जिलों में गाकर प्रस्तुत किया करते थे। संत कवि का यह भजन मुझे बचपन से याद है और मुझे बेहद प्रिय है जिसे उनके पाठकों द्वारा बहुत ही पसंद किया जाता रहा है –

लगी आँख किसी कंगाल की
सो गया स्वप्न आया है
भूखा मरता जनम भिखारी

भया सुपन में छत्तरधारी
दिया हुकम सज गई सवारी
गज रथ घोड़े पालकी
सर छत्तर की छाया है

घर पटरानी चन्द्रमुखी है
बेटे पोते सभी सुखी हैं
बली जीत कै करे दुखी हैं
करी सब राज्यों पै मालकी
बड़ा अचल राज्य पाया है

सुख में बरस हजारों बीते
बड़े-बड़े बली युद्ध में जीते
धरी तोप दग रहे पलीते
करी सैर सुरग –पाताल की
घर अरब-खराब माया है

खुल गई आँख गई प्रभुताई
टूटी छान नज़र जो आई
गंगादास कहें सिर पै पाई
फटी पगड़ी सोलह साल की
सठ जाग कै पछताया है I

संत कबीर की भाँति धार्मिक आडम्बरों पर चोट करते हुए कवि ने लिखा है-मुल्ला क्यों चढ़ें मीनारे, कहो मौला क्या बहरा है? अथवा गलती पड़ गई उरै आयकै, भूल गए उस मकान में, हिन्दू मिथ्यापन में हारे, तुरक हार गए तूफ़ान में।

धर्म के नाम पर पाखंडों /प्रपंचों के विरुद्ध भी कवि ने खूब लेखनी चलाई और उसके माध्यम से जन सामान्य को जागरूक किया। एक घटना याद आती है कि एक बार जब कुचेसर रोड, चौपले पर संत गंगादास की स्मृति में धन एकत्रित किया जा रहा था और हमारे गाँव में स्थित बाईजी की कुटी पर एक भगवाधारी साधू आए हुए थे और वे लाउडस्पीकर पर लोगों से अधिक से अधिक धन दान करने के लिए प्रार्थना करते रहते थे। एक बार मैं अपने परिजनों के साथ वहां भजन गायन के कार्यक्रम में गया। संयोगवश हमने संत गंगादास का यह भजन गाया- मन रंगा नहीं उस रंग में, क्या है कपडे रंगने में ? इसमें कवि ने केवल कपड़े रंगकर स्वयं को साधू सिद्ध करने वाले व्यक्तियों पर तंज कसते हुए और फटकार लगाते हुए उन्हें खरी-खोटी सुनाई है। संत गंगादास के सत्य कथन से उस साधू को इतनी बेचैनी और शर्मिन्दगी हुई कि उसने उक्त भजन पूरा नहीं होने दिया और बार-बार संत गंगादास की जय कहते हुए हमें वह भजन बीच में ही समाप्त करने को बाध्य कर दिया। बाद में पता चला कि उस भजन में सच्चे साधू के जो लक्षण बताए गए थे, उनसे वह कोसों दूर था, इसलिए उसे उस रचना का प्रत्येक शब्द चुभ रहा था। सदियों से हिन्दू धर्म के अनुयायी अपने व्यक्तिगत स्वार्थ और जातिगत पहचान से आगे जाकर कुछ देखना,सोचना ही नहीं चाहते और आपस में ही लड़ते –झगड़ते आए हैं तथा अब भी उसी में लगे हुए हैं और अंततः हानि ही उठाते रहे हैं। ऐसी सामजिक बुराइयों यथा जातिगत छुआछूत, वर्ण, आश्रम के आधार पर भेदभाव आदि के विरुद्ध सामान्य जन को जाग्रत करते हुए उन्होंने लिखा है कि –देह, वर्ण, आश्रम, जात पै, मत अटकै, सोक सहेगा

ऐसी मान्यता है कि देश को अंग्रेज़ी दासता से मुक्त कराने के लिए संत गंगादास जी ने लोगों को भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में योगदान देने के लिए

प्रेरित किया। इतना ही नहीं झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई से उन्होंने ग्वालियर जाकर भेंट की तथा उन्हें ईस्ट इंडिया कंपनी से लड़कर झाँसी वापस लेने को प्रेरित किया। इसके लिए संत गंगादास जी ने भी अपने सैकड़ों शिष्य झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई का साथ देने के लिए आहुत किए। कहा जाता है कि ग्वालियर में युद्ध के दौरान बुरी तरह से घायल रानी ने संत गंगादास की कुटिया में शरण ली थी तथा रानी ने संत गंगादास की गोद में अपने प्राण त्याग किए थे और स्वयं संत गंगादास ने अपने हाथों से महारानी लक्ष्मीबाई का अंतिम संस्कार किया।

गंगादास कितने उच्चकोटि के साधक व सन्यासी रहे होंगे इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है जो मैंने अपने दादाजी के मुख से सुनी थी। पश्चिमी उत्तर प्रदेश के मुरादाबाद,गाज़ियाबाद मेरठ आदि जिलों में यह मान्यता थी कि मनोकामना की पूर्ती के लिए लोग संकल्प लिया करते थे कि यदि महात्मा गंगादास जी की कृपा से कोई अटका हुआ काम पूरा हो गया अथवा सन्तान आदि हुई तो उनके भजनों का गायन करने वाली मंडली को बुलवाकर भजन–कीर्तन कराएंगे। ऐसे कई आयोजनों में मेरे दादाजी ने भागीदारी की थी।

अपनी अथक लेखनी से विपुल साहित्य भंडार संसार को समर्पित करने वाले तथा इस क्रांतिकारी संत गंगादास ने 25.08.1913 को जन्माष्टमी के दिन अपना नश्वर तन त्याग दिया। हापुड़,जिला मुख्यालय से मुरादाबाद की ओर जाते समय कुचेसर रोड, चौपले पर सन्त गंगादास जी स्मृति में एक समाधि का निर्माण रसूलपुर के उनके कुल के उत्तराधिकारियों / निवासियों के सहयोग से करवाया गया था जिसमें अपने भजनों के माध्यम से एकत्रित की गई कुछ धनराशि मेरे दादाजी ने भी दान की थी। यह समाधि राजमार्ग से सटी हुई है तथा इसके रखरखाव तथा संत कवि के साहित्य के प्रचार-प्रसार के लिए हाल ही में एक न्यास गठित करने का भी प्रयास किया जा रहा है ताकि नयी पीढी भी उनसे जुड़े और उनके अमूल्य वचनों का लाभ ले सके। सन्त गंगदास के साहित्य को साहित्यप्रेमियों तक पहुंचाने का जो भागीरथ प्रयास डॉ जगन्नाथ शर्मा ने जीवन पर्यंत किया उसे मेरे जैसे उनके भक्त /पाठक तथा रसूलपुर के पूर्व प्रधान चौधरी कर्मबीर सिंह ने यथा सामर्थ्य आज भी जारी रखा है। संतोष की बात यह है की संत गंगादास के साहित्य पर अब तक 30 से अधिक शोध कार्य सम्पन्न हो चुके हैं।

०००

डॉ. प्रभाकर जोशी
देवप्रयाग-उत्तराखण्ड मो. 9557140296

# तली रोटी

सूखी अंगुलियों से चिथडों से सिला झोला कन्धे पर डाल वह उठी तो बूढी हड्डिया कड़ाकड़ा उठीं। धूल सने बालों, मैले गालों की नातिन सांवली अभी भी गुदडी ओढ़े उकुडी सी सोई थी। डंडो के सहारे खड़ी तिरपाल की झोपड़ी से सिर झुकाकर निकलते ही उसने दूर तक फैली ऊँची बिल्डिंगो को हर दिन की तरह उदासीन भाव से देखा। यहाँ से उसे कोई आशा नहीं दिखती थी। बीती रात बिजली की लड़ियों से बिल्डिंगे एकाएक जगमगा उठी थी। बुझती जलती लाइटो को देख सांवली देर तक ताली बजाती रही थी। जब उसे पता चला कि यह सब दीवाली की तैयारिया हो रही हैं तो वह झूम उठी। "नानी, नानी दीवाली आ फिर आ गयी, इस बार भी तली रोटी खिलाओगी न?" साँवली की अचानक की गयी इस फरमाइश से वह चौंक उठी। किसी तरह 'हाँ' बोलकर जब उसने तेल की खाली शीशी देखी तो धक् रह गयी।

सवेरे का उजास होते ही लकड़ी टेकते वह नंगे पाँव कंकड़ भरे रास्ते पर निकल पड़ी थी। झोले में पड़ी खाली शीशी का भार न जाने उसे क्यों ज्यादा लग रहा था।

"अरे माई! अपनी धुन में सीधे कहाँ निकली जा रही हो?" रास्ते के धूनी वाले बाबा की भारी आवाज से वह ठिठक गयी। सांवली की तली रोटी की मांग से वह विचलित थी।

चिमटे से धूनी में जल रहे लकड़ी की मोटी गाँठ से आग झाड़ते बाबा बोला,

"अरे माई, पता है इस बार राम की पैड़ी पर दीवाली मनने जा रही है।"

बात न समझते वह बाबा की ओर मूढ़ दृष्टि से देखने लगी।

"अरे, पीड़ियों पर सजेंगे हजारों दिये। ऐसी दीवाली क्या ही इस जनम में तुमने देखी होगी। कई मन तेल लगेगा।"

तेल का नाम कानों में पड़ते ही उसकी सूखी काया झनझना सी उठी, "क्या बोले बाबा? मनो तेल लगेगा "

'अरे और नही तो क्या, दिये क्या ऐसे ही जलेंगे। "

बूढे मन में एक लौ-सी टिमटिमा उठी। बाबा उसके मन की बात न पकड़ ले इसलिए सम्भल कर बोली,

"बाबा, वहाँ तक जा पाती तो देखती हजारों दियो की दीवाली, मगर अब तो चला नहीं जाता। "

बाबा उसकी बात अनसुनी करते धूनी से चिंगारिया चिमटे से उड़ा मगन रहा था। साँवली जग गयी होगी, सोचकर वह वापस चल पड़ी। बिस्तर पर साँवली नहीं थी। उसको आवाज देने बाहर निकली थी कि सामने से वह आती दिख गयी।

"नानी, देखो कितने पटाखे ले आई हूँ, रात में जलायेंगे इन्हें, खूब दिवाली होगी" फटे झगूले में बिल्डिंगो के बाहर से बटोर कर लाई अधजले पटाखों को दिखाते साँवली बोली। दोपहर में हंडिया में पकाये हल्दी मिले चावल उसने डरते हुए सांवली की थाली में परोसे।

'नानी!', साँवली मुँह बनाते बोली, 'तली रोटी

नहीं बनाई न।'

अरे पगली, दिवाली तो रात को है, दिन में थोड़े बनती है। सांवली को किसी तरह मनाते वह बोली। तेल जुटाने की चिंता उस पर फिर से सवार हो गयी थी। धूप बिल्डिंगो की उपरी मंजिलो तक पहुँच चुकी थी। शाम होने को थी पर तली रोटी के लिए तेल का जुगाड़ नही हो पाया था। सामने की बिल्डिंग की एक दयालु मेमसाब मांगने पर उसे कुछ न कुछ दे देती थी। मगर आज दिवाली थी। मेम साब अपने काम काज में लगी होगी, ऐसे में मांगने जाना ठीक नहीं होगा यही सोच वह चुप बैठी रही। जो कुछ पूंजी उसकी जमा थी उससे दो दिन पहले ही उसने आटा, चावल खरीद लिया था मगर महंगा तेल नहीं ले पायी थी।

शाम का गहराता अंधेरा उसकी आत्मा पर छाने लगा था। अचानक धूनी वाले बाबा की बात उसके मन में कौंध गयी, हजारों मन तेल के दिये जलेंगे। वह ख़ाली शीशी, चिथड़े वाले झोले में डाल उधर चल पड़ी जहाँ भीड़ का रेला बढ़ा जा रहा था। सूखी टांगों पर जोर लगाते वह चल रही थी। भगवान की जय जयकार धरती से आकाश तक गूंज रही थी। बुदबुदाते हुए वह अपनी क्षीण आवाज उसमें मिला रही थी। भीड़ के रेले में कब वह राम की पैड़ी तक पहुँच गयी कुछ पता नहीं चला। शांता नदी के किनारे बनी पैड़ियों पर सैकडो लोग जमा थे जो दिये सजाने में जुटे थे। मिट्टी के दिये तेल से भरे जा रहे थे। तेल की पारदर्शी धार उसकी आत्मा को भिगोये जा रही थी। एक-एक कर जलते दियो की झिलमिल।हट से शांता नदी स्वर्ग समान लग रही थी। साँवली भी इसे देखती तो कितनी खुश होती मगर यह छोकरी न जाने कहाँ भटक रही है। अनिश्चय से लकड़ी के सहारे खड़ी वह सोचती रही। श्रद्धा में डूबे लोगो में भगवान् के दिये सजाने की होड़ मची थी। बूढ़ी आँखों में संसार छोड़ चुकी बेटी का चेहरा आ-जा रहा था। साँवली ही अब दुनिया में उसकी इकलौती निशानी रह गयी थी। मन्दिर की महापूजा में बज रहे शंख, घण्टे, ढोलों के साथ भीड़ तालिया मिलाते आनंद से डूबी थी। वह संभलते हुए वहाँ तक आ गयी जहाँ गोल घेरे में रखे दियो का पीला प्रकाश अद्भुत छटा बिखेर रहा था।

"अरे, बुढिया, आगे खिसक, कहाँ रास्ते में खड़ी है।" किसी ने उसे धकिया दिया था। बेढंगे चलते लोगो के पैरो से उलटे दियों का तेल सीढियो पर बिखरने से उसका मन कसक उठा था। भगवान की आरती का समय होते ही सभी का मुख उस ओर हो गया था। धीमी हवा चलने से कई दिये बुझने लगे थे। क्षमा प्रभु! क्षमा! बोलते वह बुझे हुए दियों के पास बैठ गयी। कांपते हाथों से वह बुझे दिये में बाकी रहे तेल को खाली शीशी में उडेलने लगी। हे भगवान्! यह क्या पाप कर रही हूँ मैं, सोचते वह ठिठकती फिर साँवली का ध्यान आते ही फिर से अपने काम में जुट जाती।

हवा भी जैसे दियों के खिलाफ हो गयी थी। जल्दी जल्दी बुझते दियों के तेल से शीशी भर चुकी थी।

'सांवली की तली रोटी तो इससे बन ही जायेगी।' शीशी का ढक्कन बंद कर वह तेजी से झोपड़ी की ओर चल पड़ी। साँवली बिल्डिंगों में हो रही आतिशबाजी देखने में गुम थी। तवे पर पड़ी रोटी के किनारों पर तेल लगाते ही महक भरा धुआँ झोपड़ी में भर गया। सांवली ने आते ही तली रोटी का कौर मुह में डाला तो चहुक उठी। "वाह नानी, कितनी स्वादिष्ट बनी है तली रोटी।"

साँवली के मुरझाये चेहरे पर उसको वही मुस्कराहट दिख रही थी जो मन्दिर में भगवान के मुख पर उसे दिखाई देती थी।

०००

डॉ. राकेश चक्र
मुरादाबाद, उ.प्र . मो. 9456201857

# कन्नन की डोंगी

सूर्य अस्त होने के बाद सूर्य की लालिमा भी पूर्व की ओर अस्त होती जा रही थी। बंगाल की खाड़ी के सागर में बज रहा संगीत मुझे प्रफुल्लित कर रहा था। कई बड़ी कश्तियाँ रामेश्वरम के तटों से बँधी हुई हिलोरें ले रहीं थीं। मौसम बहुत सुहावना था। पक्षी भी अपने - अपने बसेरों की ओर लौट गए थे। सर-सर करती हवाएं तन-मन को तरोताजा कर रही थीं।

मैं तट के बने बँधे की पटरी पर अपने सैंडल उतार कर नङ्गे पैर तेज कदमों से टहल ही रहा था कि यकायक मेरी दृष्टि एक मछेरे पर पड़ी, जो बहुत फुर्ती से अपनी छोटी कश्ती यानी डोंगी और तीन जालों आदि को कन्धे पर रखकर अभी-अभी लाया था। साथ ही थीं दो ईंटें, जिनको प्लास्टिक की रस्सी से बांधा गया था, दो-तीन खाली बोतलें और साथ ही उन बोतलों के साथ कुछ स्पंज या थर्माकोल के टुकड़ों-जैसा कुछ बंधा हुआ था, साथ में केवल और केवल एक चप्पू। मैंने अपने टहलने की रफ्तार कम कर दी और उसकी रफ्तार देखने लगा। उसने तुरत-फुरत अपनी पहनी लुंगी को उतारकर सर से बांध लिया और तीनों जालों की रस्सियों को खोल दिया। अपनी कश्ती को समुंदर की लहरों के बीच डाल कर खुद उस पर झट-पट सवार हो गया और अपने जालों को पानी मे डाल दिया।

उसके चेहरे का रँग तवे की तरह काला, चेहरा लंबा-सा, दुबला-पतला शरीर, दाढ़ी बढ़ी हुई और सिर के बाल बिखरे हुए थे। उम्र रही होगी करीब पैंतीस-चालीस के बीच। वह कश्ती को समुन्दर की धार के विपरीत ऐसे आगे बढ़ाने लगा, जैसे कोई बच्चा हवा के विपरीत फिरकनी नचा रहा हो। वह आगे-आगे लहरों के बीच बढ़ता गया और मैं भी।

अब मेरी दृष्टि स्वयं और उसके जीवन पर टिक गई। पेट की भूख के लिए हमेशा समंदर की तेज गतिवान लहरों से खेलना कोई आसान काम न था, लेकिन यह उसका नित्य का ही शगल था और एक मैं था जो सब कुछ होते हुए भी कष्ट आने पर यदा -कदा विचलित हो जाता। ईश्वर का धन्यवाद ज्ञापित कर, मैं उसे टकटकी लगाए देखता रहा। वह मछलियों की तलाश में बढ़ता ही जा रहा था। कुछ देर बाद उसने अपनी कश्ती को पीछे की ओर मोड़ लिया और अपने चप्पू को तेज गति से चलाता रहा। धीरे-धीरे अँधेरा बढ़ता जा रहा था। करीब एक घंटा हुआ ही था कि वह उसी तट की ओर लौटने लगा, जिधर से वह गया था। उसने अपनी कश्ती को किनारे लगाया और फुर्ती से उतर गया। जाल आदि खोल लिए।

मैंने देखा उसने अपने एक जाल से दो छोटी मछलियां और केकड़े जैसा समुद्री जीव निकाला और

समुद्र के पास बनी पटरी पर अपनी लुंगी में लपेट कर रख दिया। वह तीनों ही बेजान होकर छटपटाना बंद कर दिए थे। मैंने सोचा क्यों न फुर्ती से पानी के हवाले कर दूं। लेकिन मन ने इसलिए रोक दिया कि उनके अब प्राण पखेरू उड़ गए हैं। मैं इसे उनकी कीमत अदा कर दूंगा।

फिर से उसने उसी फुर्ती से अपने जालों आदि को समेटा और उन्हें समुन्दर के किनारे पटरी के नीचे दुबका दिया और डोंगी को उठाकर उस तरफ ले आया, जिधर से वह लाया था। वहाँ पूर्व से ही अनेकों छोटे मछेरों की बहुत सारी इसी तरह की कश्तियां एक के ऊपर करीने से रखी हुईं थीं। वह अपनी कश्ती रखकर पटरी पर आया, जहाँ उसकी शिकार की गई दो मछलियां और केकड़ा नुमा जीव रखा हुआ था।

मैं उसके पास गया और उसका नाम पूछा " आपका नाम।"

"कन्नन।" उसने अपना नाम बताया। वह थोड़ी-थोड़ी हिंदी समझ रहा था। यहाँ की मात्र भाषा तमिल थी।

मैंने पूछा आपके जाल में मछलियां नहीं फँसी तो उसने मुस्कान बिखेरते हुए कहा "कल को पकड़ेगा।"

"आपके कितने बच्चे हैं"

उसने कहा '"सात"

"इन दोनों मछलियों और केकड़े को आपकी भाषा मे क्या कहते हैं"

उसने चेहरे पर फिर मुस्कान लाते हुए कहा "इस मछली का नाम कटकट है और केकड़े का नाम टन्न है। इनका एक्सपोर्ट हो जायेगा।

मैं यह बात सुनकर आश्चर्यचकित रह गया कि एक्सपोर्ट इनका।

"इनकी कीमत क्या होगी"

वह मुस्कुराते बोला" चार सौ रुपया"

मुझे उसकी मुस्कान का राज समझ में आ गया था। सच में जीना भी इसी का नाम है। वह जाने की जल्दी में था। मैंने तुरंत सवाल दाग दिया कि ये नाव किस चीज से बनती हैं।

उसने टूटी-फूटी हिंदी में कहा, "थर्माकोल जैसी चीज से, जिसपर हम प्लास्टिक की बोरी लगाकर चारों ओर से मजबूती से सिल देते हैं----------।"

उसे जाने की वैसी जल्दी थी, जिस फुर्ती और जल्दी से वह आया था। वह ओके कह और मुस्कान बिखेरता हुआ तेज कदमों से आगे बढ़ गया था।

मैं उसकी चेहरे की मुस्कान, नंगे पांवों और भीगे वस्त्रों को तब तक देखता रहा, जब तक वह मेरी आँखों से ओझल नहीं हो गया।

ooo

विपिन जैन
गाजियाबाद - उत्तर प्रदेश मो. 9873927829

# सफाई पसंद

आज मैं सोकर उठा तो मुझे लगा कि मेरा कमरा मुझसे कुछ कह रहा है। मैंने कहा-"रोज तो मैं विभा की बातें सुनता हूँ। आज तुम कहो क्या कहना चाहते हो? वो चार दिन से बाहर है, और आज उसके लौटने का दिन है। तुम कब मुझे कुछ कहते हो, तुम्हें जो कहना है कहो, मैं सुनने को तैयार हूँ। यह तो तुम्हें याद होगा कि विभा तुम्हें कितना जी-जान से साफ-सुथरा रखती है।" वह हँसने लगा, और बोला-"वह तो मेरा ध्यान रखती है, पर तुम्हें मेरी तरफ देखने की फुर्सत कहाँ होती है? तुम्हारा लेना-देना तो सिर्फ बिस्तर से रहता है, जिस पर लेटकर तुम्हें नींद और आराम मिलता है। मेरी तरफ तो नजर डालते ही नहीं हो। " मैंने कहा-"सीधे-सीधे कहो क्या कहना है? उसने कहा -"मैं क्या कहूँ खुद ही देख लो। मैं किस तरह बिखरा और फैला हुआ लग रहा हूँ। क्या विभा के होते ऐसा रहता हूँ कभी?" मैंने उसकी तरफ भरपूर नजरों से देखा। मुझे लगा वह ठीक कह रहा है। चार दिन में ही कमरे का हाल बुरा हो गया है। सारी चीजें अस्त-व्यस्त हैं। ओढ़ने-बिछाने की चादरें सिकुड़ी हुई हैं। चाय का कप सिरहाने रखा है। कोई भी चीज सलीके से नहीं रखी गई है। अखबार और कागज इधर-उधर बिखरे पड़े हैं। मुझे लगा कि जैसे मेरे पीछे ही विभा खड़ी मुझसे कह रही है-"कम-से-कम मेरे पीछे तो घर का हाल ठीक रखा करो।"

मैंने कुछ देर में सारी चीजें व्यवस्थित कर दीं और झाड़-पोंछ दी। फिर एक निगाह डाली तो मुझे संवरा हुआ कमरा अच्छा लगा। मैं अपने किये पर मुस्कराया। मैं भी तो सफाई पसंद हूँ। साफ-सुथरा घर मुझे भी अच्छा लगता है। मुझे देखता हुआ कमरा मुस्कराने लगा। जैसे वह कहा रहा था-"चलो आज तो तुम्हें कुछ ख्याल आया मेरा। रोज ऐसे ही ख्याल रखो तो रार-तकरार की नौबत न आये।" मैंने अपनी सफाई दी-"मैं जैसे रहता हूँ, साफ-सफाई से ही रहता हूँ। मगर सफाई का भूत अपने सिर पर नहीं ढ़ोता। दूरबीन लिये हुए नहीं घूमता। सफाई में भी सफाई ढूँढ़ना मेरी आदत नहीं है। विभा की सफाई पसंदगी मेरी कभी समझ में नहीं आई। मैं तो कहता हूँ अपना घर है, अपना जीने का ढ़ंग है, अपनी आदतों और अपनी स्वतंत्रता के साथ हम घर में न रहें तो कहाँ रहें? आखिर घर हमें अपनी तरह रहने की स्वतंत्रता देता है।"

पहले एक हमारा पुराना घर था, कोई नहीं कहता था कि हम गन्दगी में रहते हैं। परन्तु विभा जब मेरे साथ विवाहित होकर आई तो उसने सफाई की जरूरत हमें बताई और दिखाई। हमें लगा कि वाकई हम सफाई से नहीं रहते। उससे पहले दूसरे-तीसरे दिन माँ और बहन मिलकर कमरे और बरामदे के फर्श धो देती थी। रोज झाड़ू लग जाती थी। उस घर के फर्श भी पुराने और घिसे हुए थे। इस घर की तरह चिकने और पत्थर के कहाँ थे? खुद ही घर की देखभाल करनी होती थी। आजकल की तरह कामवाली नहीं होती थीं। हर व्यक्ति की हैसियत भी ऐसी नहीं होती थी। कुछ अमीर घरों में ही नौकर रखे जाते थे। विभा ने आकर सफाई की महत्ता हमें समझाई। हमें लगा कि सफाई भी एक जरूरी चीज होती है और उसकी कमी बुराई कहलाती है। उसके बाद घर में जैसे सफाई का काम रसोई से ज्यादा बड़ा हो गया था। सफाई के मोर्चे पर माँ और विभा की लड़ाई-भिड़ाई होती रहती थी। इसमें सुलह सफाई मुझे करनी पड़ती थी। फिर पुराने घर को छोड़कर नये फ्लैट में आ गये तो वहाँ चिकने और चमकदार फर्श देखकर विभा की आँख चमक से भर गयी थी। मैंने उस चमक को देखते हुए कहा-"यहाँ तो तुम्हारे पसंद के फर्श हैं। यहाँ के फर्श ज्यादा घिसाई और रगड़ाई भी नहीं माँगते। यहाँ आकर कामवाली मेड भी साफ-सफाई के लिए लगा दी गई थी। विभा ने मेरी बात सुनकर ताना मारा-"फर्श तो चमकदार तब रहेंगे जब तुम रहने दोंगे। पहले तो तुम्हीं सफाई के दुश्मन थे अब बच्चे भी तुम्हारी टीम में शामिल हो गये

हैं। जो मेरा काम बढ़ाने में लगे रहते हैं।" मेरे दोस्त जो कभी-कभार आ जाते थे, अब आने में झिझकने लगे थे। उनमें कुछ विभा की सफाई की सनक को अपनी बातों से और गहरा कर देते थे। विनोद तो अक्सर कहता- "भाभी जी फर्श को चिकना और साफ रखना तो आपके बूते का ही काम है। हमें तो लगता है जैसे हम पांव रखेंगे तो फर्श मैले हो जायेंगे।" वह तारीफ से भरकर और सफाई प्रेमी बन जाती। यह कहती कि मैं क्या करूँ? मेरे किये को मटियामेट करने में ये कोई कसर नहीं छोड़ते। अरे घर में सफाई रहेगी तो मोहल्ला साफ लगेगा। अगर मोहल्ला साफ रहेगा तो नगर साफ दिखाई देगा। और नगर साफ होगा तो देश साफ लगेगा। हमने सफाई की संस्कृति कहाँ अपनाई है? सफाई एक कल्चर है, जो सिखाये से नहीं, खुद से ही आती है। तभी तो हमारी नदियाँ और पहाड़ मैले हो गये हैं। मुझे कहना पड़ता-"भाषण तो खूब अच्छा दे लेती हो। घर की सफाई के साथ मन की सफाई भी जरूरी है।" उसकी सफाई पसंदगी में धीरे-धीरे दकियानूसी बातें भी जुड़ने लगी थीं। उसे नजर आता कि सफाई की कमी से दुर्भाग्य भी जुड़ा है या अंधविश्वास उसकी बातों में दिखाई देने लगा था। सफाई की धुन देखकर मैंने एक परोडी बनाई।

**धोये जा बस धोये जा/**

**जहाँ मिले,जो जहाँ दिखे जो, पानी में भिगोये जा/**

**कपड़े धो या दुखड़े धो, जीवन के रगड़े-झगड़े धो/**

**फर्श धो अर्श धो/ हँसी-खुशी विमर्श धो/**

**धोये जा बस धोये जा।**

वह चिढ़कर बोली-"तुम तो गंदगी के कीड़े की तरह गंदगी में रहना पसंद करते हो। सफाई से आदमी के अन्दर की तस्वीर दिखाई देती है; जैसे-खुद रोज नहाते हो, घर को भी तो सफाई चाहिए। पशु-पक्षी भी साफ जगह देखकर बैठते हैं। मुझे आखिर सत्य वचन कहकर उसे चुप कराना पड़ता। कामवाली तो मिल गई, उसके काम के साथ खुद भी जुटी रहने लगी। मेरी मुश्किल यही थी कि वह मेरे जरूरी-गैरजरूरी कागजात सब उठाकर किसी भी जगह ठूँस देती और मैं परेशान होकर घण्टों उन्हें तलाशता। सफाई की धुन कभी-कभी मुश्किल भी बन जाती। एक तरफ कहीं बाहर जाने की जल्दी होती, दूसरी तरफ वह सफाई में जुटी दिखाई देती। चलते-चलते भी चीजें संवार देना या कमरे को साफ-सुथरा बनाने की इच्छा उसे देरी की तरफ ध्यान से दूर रखती थी। कई बार हमें देरी की वजह से गाड़ी निकालने की परेशानी झेलनी पड़ी थी। मैं उसे बार-बार कहता सफाई तो ठीक है मगर समय और मौका तो देखा करो। हर समय एक ही राग ठीक नहीं है। तुम्हारा सफाई पसंद होना कई परेशानियों की वजह बनने लगा है। इसमें छुआछूत भी दिखाई देने लगा है। सफाई ही तुम्हारी खुदाई न बने। कभी-कभी अपने अन्दर की भी सफाई कर लिया करो। बाहर का मैल अन्दर भी जमा होता रहता है।

स्टेशन से विभा को लेकर लौटते हुए मेरे अन्दर कमरे को देखकर विभा की प्रतिक्रिया घूम रही थी। मैं इस खुश ख्याल में डूबा हुआ था कि विभा कमरे को व्यवस्थित और साफ-सुथरा देखेंगी तो आश्चर्य से भरकर पूछेगी-"क्या यह सब तुमने किया है? तुम्हारे जैसे कबाड़ी और आलसी आदमी को कमरे को साफ रखने की सुध कैसे आ गई? तुम्हारी आजादी में कोई खलल तो नहीं पड़ा?" मैं यह सोच ही रहा था कि उसने पूछा-"कमरे का क्या हाल बना रखा होगा, मुझे तो उसे संवारने में घण्टों लग जायेंगे। मैंने कहा घर पहुँचो तो बात करना। वह हँसने लगी, तुम्हारी आदतें तो मैं खूब जानती हूँ। मैंने कहा-"मैडम पांव के निशान तो मिट्टी में ही बनते हैं। चिकने फर्शों पर नहीं। तुम मेरे पांव के निशान भी तो कभी ढूँढोगी।" वह चिढ़ी और कहने लगी-"फालतू की बकवास करने में माहिर हो। सिर्फ सफाई से रहना नहीं सीख सकते।" घर पहुँचे तो उसकी निगाहें कमरे को देखकर मुझे रही थी। 'यह सद्बुद्धि तुम्हें कैसे आई?' मैंने हँसते हुए कहा-"तुम खुद कमरे से पूछ लो। मैंने ही इसे संवारा और साफ किया है। मैंने सोचा कि चलो आज तुम्हारी तरह ही सोचकर देखते हैं। सफाई को अपनाकर देखते हैं। तुम्हें ये अच्छाई पसंद आई? शायद वह सोच रही थी कि यह मेरे अन्दर का परिवर्तन है। पर यह उसकी गैर-हाजिरी में दिल में आया एक ख्याल भर था। जैसे मेरी आदत और पसंद है, वैसे ही आगे मैं रहूँगा और जैसा उसे पसंद है, वैसा वह करती रही है। मुझे देखते हुए उसकी निगाहें कमरे का कोई सफाई से छूटा हुआ कोना या बिखरा हुआ सामान ढूँढ़ रही थी।

०००

यशी
लखनऊ-उत्तर प्रदेश मो० 8853156569

# फिर आया बसंत

बगीचे में पीले पीले फूल खिले कितने सुंदर लग रहे है कितना खुशनुमा माहौल दिख रहा है। कॉलोनी में किसी के घर ढोलक बज रही है, ऐसा लग रहा है किसी के घर में शादी है। परन्तु मुझे क्या मेरे जीवन में तो न जाने कब बसंत आयेगा। यह सोच चंचल अपने घर के अंदर आ गयी। काम वाली बाई से इस कॉलोनी का पूरा हाल चाल मिल ही जाता है, बस इतना ही काफी है। चंचल इस कॉलोनी में अभी नयी आई है। उसकी व्यस्त जिंदगी में बसंत कहा है, बसंत का मौसम न जाने क्यों हर दिल की धड़कन बढ़ा देता है। प्रत्येक व्यक्ति, जीव-जन्तु, पशु-पक्षी इस ऋतु में चहकते हुए मिलता है। "मम्मी मुझे भी पीले रंग की फ्रॉक पहना दो, मेरी सब सहेलियों ने पीले रंग की फ्रॉक पहनी हुई हैं," मिनी ने हँसते हुए कहा। चंचल की तन्द्रा टूटी 'हाँ- हाँ, मैं अभी पहनाती हूँ। ' मिनी फ्रॉक पहनकर खेलने चली गयी। चंचल आराम कुर्सी पर बैठ अपने बीते दिनों को याद करने लगी।

बसंत के दिन ही उसका विवाह शेखर के साथ हुआ था। शेखर बहुत ही अच्छे इंसान थे। समय तीव्र गति से बढ़ रहा था मिनी का जन्म हुआ, घर में खुशियाँ छाई हुई थीं कि अचानक शेखर को ऑफिस के काम से विदेश जाना पड़ा। शेखर विदेश चले गए, दो तीन साल तक तो हाल चाल मिलता रहा, फिर सब बंद हो गया। कोई समाचार न मिलने के कारण चंचल को नौकरी करनी पड़ी। उसके जीवन में बहुत संघर्ष थे। परन्तु उसने हिम्मत नहीं हारी, अचानक दरवाजे की कॉल बेल बजी। चंचल उठी उसने सोचा की मिनी होगी, परन्तु अपने पति को देख कर वह आश्चर्य चकित हो गयी। जिसकी आशा उसे नहीं थी, उसके पैरों तले की जमीन खिसक गयी। उसने सोचा की वह सपना तो नहीं देख रही है "अरे अन्दर तो आने दो" शेखर ने बोला चंचल हडबडाते हुए बोली 'हाँ-हाँ, अन्दर आओ। ' शेखर ने घर पर नज़र डाली, घर वैसे ही सजा था, जैसे वह छोड़ गया था। उसे अपने ऊपर बहुत गुस्सा आ रहा था, अपना इतना प्यारा घर संसार छोड़ कर वह कहाँ भटक गया था। उसने चंचल से कहा, 'मुझे माफ़ कर दो, मैं अब कभी तुम लोगो को छोड़ के नहीं जाऊँगा।' चंचल मुस्कुराई बोली "आप आ गए हमारे जीवन में पुनः बसंत के फूल खिल उठे" रात्रि का गहन अंधकार मिट चुका था सुबह की लालिमा फ़ैल चुकी थी, शेखर ने चंचल का हाथ पकड़ा, और बोला "चलो इसी बसंत से पुनः नए जीवन की शुरुआत करते है।"

०००

डॉ.दिनेश पाठक'शशि'
मथुरा-उत्तर प्रदेश मो. 9870631805

## तीन लघुकथा

### एण्टी करैप्सन

रिश्वत लेने के आरोप में अरोड़ा जी को एण्टी करैप्सन टीम ने रंगे हाथों पकड़ लिया और अरोड़ा जी को जेल की हवा खानी पड़ी। आरोप-पत्र दाखिल न हो पाने के कारण अरोड़ा जी जमानत की अर्जी भी नहीं दे पा रहे थे। उन्होंने कचहरी के सिपाही से आरोप-पत्र दाखिल करवा देने का अनुरोध किया तो सिपाही ने सी.बी.आई. से जेब गरम करने का वायदा करके ,आरोप-पत्र शीघ्र दाखिल करने के लिए कहा। कई दिन तक जेल में रहने के बाद सी.बी.आई. ने उनका आरोप-पत्र दाखिल किया।

आरोप-पत्र की प्रति अरोड़ा जी को थमाते हुए सिपाही ने पुनः एक बार सेवा करने के लिए कहा तो साथ खड़े अरोड़ा जी के भाई ने सिपाही को एक हजार रुपये थमा दिए। पूरी भीड़ के सामने सिपाही ने अरोड़ा जी के भाई के हाथ से रुपये लेकर जेब के हवाले कर दिए। इस बार किसी एण्टी करैप्सन टीम ने सिपाही को रंगे हाथों नहीं पकड़ा।

### दोहरे मापदण्ड

अपनी ससुराल में घुटनों तक जींस-स्कर्ट पहनकर, कार में उड़ान भरती ननद ने अपनी भाभी को हिदायत दी,-"हमारे घर में यह सलवार-सूट नहीं चलेगा, समझी? यहाँ रहना है तो ढंग से साड़ी-ब्लाउज पहनकर, ठीक से रहना पड़ेगा।"

### शुभचिंतक

सेवा निवृत्ति के बाद कुछ दिन तो यों ही बीत गये। बहुत से काम जिन्हें बाबूराम जी करना चाहते थे और नौकरी की व्यस्ततावश कर नहीं पाते थे, उन्होंने एक-एक कर सब निपटा डाले।

उसके बाद कुछ दिन में ही वह अपने कमरे में पड़े-पड़े बोर होने लगे। वह सोच ही रहे थे कि अब क्या किया जाए? बहू सुबह ही सुबह अपनी नौकरी पर निकल जाती है और शाम को ही लौटती है। पुत्र अपनी बिजनेस में व्यस्त रहता है। किसी को किसी से बात करने की भी फुर्सत नहीं है। और नाती, वह सुबह का स्कूल गया दोपहर में छुट्टी के बाद अपनी माँ के दफ्तर चला जाता है और शाम को अपनी माँ के साथ ही लौटता है। घर में रह गये अकेले बाबूराम जी और उनकी पत्नी। अब बुढ़ापे में दोनों क्या बात करें सारा दिन।

अपनी पीड़ा जब उन्होंने पुत्रवधु रजनी को बताई तो रजनी ने एक आइडिया दिया- 'ऐसा करिए पापा कि कल से धैर्य को दोपहर में स्कूल से आप ले आया करिए। घर जल्दी आकर वह आपके साथ थोड़ा खेल भी लिया करेगा और थोड़ा-बहुत आराम भी कर लिया करेगा। मेरे साथ तो उसकी घेराबन्दी जैसी हो जाती है।'

पुत्रवधु का आइडिया बाबूराम जी को बहुत अच्छा लगा और उन्होंने दूसरे ही दिन से अपने छोटे से नाती को दोपहर में उसके स्कूल से घर लाना शुरू कर दिया। लेकिन बाबूराम जी ने उसी दिन से एक बात जरूर नोट की कि जब भी वह धैर्य को स्कूल से लेकर लौटते हैं, पड़ोस की दो-तीन महिलाएँ उन्हें झाँक-झाँक कर देखने लगती हैं।

एक दिन उनसे रुका नहीं गया तो पूछ बैठे,-'क्षमा कीजिए, कई दिन से एक बात महसूस कर रहा हूँ मैं कि जैसे ही मैं स्कूल से धैर्य को लेकर आता हूँ, आप लोग आपस में कुछ काना-फूंसी करने लगती हो। क्या कुछ कहना है आपको?'

"नहीं, कुछ नहीं बाबू जी, दरअसल हमें आप पर दया आती है।"-उनमें से एक स्त्री ने बात शुरू की।

'दया आती है। वह क्यों?'-

"दरअसल हम लोग शुरू से ही आपको देखते रहे हैं। आप जब नौकरी पर थे तब भी बहुत मेहनत करते थे और अब रिटायर हो गये हैं तो भी चैन नहीं लेने दे रहे आपके बेटा-बहू। बहुत तेज हैं दोनों। अपनी चतुराई से आपकी बहू ने दोपहरी में धैर्य को स्कूल से लाने का काम सौंप दिया आपको।"

'आपकी शुभचिंतना के लिए धन्यवाद। बात ये है कि धैर्य के साथ उसके स्कूल के नन्हे-नन्हे बच्चों को खिलखिलाते, ऊधम मचाते और तरह-तरह की शरारतें करते हुए देखकर मुझे अपना बचपन याद आ जाता है। बच्चों के बीच भूल ही जाता हूँ कि मैं बूढ़ा हो गया हूँ। सुनकर सभी खिसियाई सी अपने-अपने घर में घुस गईं।

ooo

विष्णु सक्सेना
गाजियाबाद –उत्तर प्रदेश मो. 9896888017

# दो लघु कथाएं

## चबूतरा

- ऑफिसर , यह नोटिस आपने भेजा है !

- जी, कोई शक !

- क्यों भेजा ?

- यह तीसरा व आखिरी नोटिस है, जो यह सूचित करता है कि आप अपनी बिना लाइसेंस लिए बनाई गई शराब की फैक्ट्री को, जो सरकारी जमीन पर अवैध रूप से बनी है – को कल दोपहर तक बंद करवा कर तुडवा दें !

- यदि ना तुडवाऊँ तो ?

- तो कल दोपहर 12 बजे के बाद, उस पर बुल्डोजर चलवा दिया जायेगा !

- ऑफिसर, काम अपना भी चलता रहे और आपका भी। इसीलिए कल आपको अटैची भर कर पत्रं पुष्पं भिजवाए थे। पर आपने वापिस कर दिए। यदि कम थे, तो बताते और भिजवा देते !

- माफ़ कीजिये यह चबूतरा बिकाऊ नहीं है !

- ऑफिसर, जो चबूतरा हम खरीद नहीं पाते, उसे अपने रास्ते से हटवा देते हैं !

- ठीक है , तो कोशिश कर के देख लो ! पर कल दोपहर 12 बजे से पहले तक –वरना ---------!**

## खूंटा

- क्या तुमने भी करवा चौथ का व्रत रखा है ?

- हाँ !

- पर ऐसे वहशी पति के लिए !

- जैसा भी हो बहना , आखिर वह नासपीटा मेरा खसम है !

- पर यह रोज रोज की मारपीट और गाली गलौज !

- क्या करूं बहना ? पीने के बाद वह अपना आपा खो बैठता है !

- तुम्हें प्रतिरोध तो करना चाहिए !

- अरी , पत्थर से सिर टकराने से माथा तो अपना ही फूटेगा !

- तब ऐसे पत्थरदिल के लिए तू करवा चौथ का व्रत रखना छोड़ दे !

- वह कमीना ही सही ! पर मैं उस कमीने के लिए नहीं, जिस खूंटे से बंधीं हूँ उस खूंटे के

लिए यह व्रत रखती हूँ ! **

०००

डॉ. संदीप कुमार सिंह
गुलावठी, बुलंदशहर (उ0प्र0) मो. 9456814243

व्यंग्य

# कालेज की पुताई

"मैं सोचता हूँ, अतः मैं हूँ।" पाश्चात्य दार्शनिक रेने डेकार्त ने जब स्थापना दी तो दर्शन जगत में क्रांति आ गयी। डेकार्त की उक्ति का अर्थ था कि सोचने से ही मनुष्य का अस्तित्व है। इसका मतलब यह भी हुआ कि जो सोचता नहीं है, वह मनुष्य कहलाने लायक भी नहीं होता। जिस प्रकार दाना, पानी और हवा के बिना ज़िंदगी संभव नहीं है, उसी प्रकार सोचने के बिना भी जिंदगी संभव नहीं है।

सभी जीव कुछ न कुछ सोचते रहते हैं, इन जीवों में बड़का जीव कुछ ज्यादा ही सोचता है। संस्था का मुखिया होने के नाते प्रधानाचार्य अपने को बड़का जीव में भी और बड़का जीव मानते हैं। इसीलिए वे मानते हैं कि उन्हें अधिक से अधिक सोचना चाहिए। इसी ज़िम्मेदारी को निभाने के नाते प्रधानाचार्य कालेज की बेहतरी के लिए लगातार कुछ न कुछ सोचते रहते थे।

पिछले दस सालों से कालेज की पुताई नहीं हुई थी। इन दस सालों में प्रधानाचार्य के मन में शायद ही कोई ऐसा दिन रहा हो जब उन्होंने कालेज की पुताई करवाने के बारे में सोचा न हो। लेकिन, हर बार कोई न कोई ऐसा व्यवधान आ जाता कि उनके विचार कार्य में तब्दील नहीं हो पा रहे थे। वे अपनी सोच को अमली जामा नहीं पहना पा रहे थे।

अबकी बार प्रधानाचार्य ने पक्का मन बना लिया कि कुछ भी हो जाए, कालेज की पुताई करवाकर रहूँगा। उन्होंने अपने विचारों को कार्य में बदलने के लिए सभी शिक्षकों एवं बाबुओं की पंचायत बुलाई। उनका लोकतंत्र में दृढ़ विश्वास था इसलिए कोई भी काम सभी की सहमति से करते थे।

"आप सभी को पता ही है कि पिछले दस सालों से कालेज की पुताई नहीं हुई है। मेरा विचार है कि कालेज की पुताई करा दी जाए।" प्रधानाचार्य के इतना कहते ही कुछ शिक्षकों में होड़-सी लग गई कि कौन सबसे पहले उन्हें धन्यवाद दे। वे अपने आपको सिद्ध करने में लग गए कि कभी प्रधानाचार्य जी हुजूरी का गोल्ड मेडल दें तो उनकी झोली में गिरे।

"साहब, मैं तो कई महीनों से इस बारे में आपसे कहना चाहता था कि कालेज की पुताई करवा दी जाए लेकिन कह नहीं पाया।" राठौर जी ने प्रधानाचार्य की हाँ में हाँ मिलाते हुए कहा।

"साहब मैं तो आज ही कहने वाला था कि कालेज की पुताई करवा दीजिए। कालेज बहुत गंदा दिखता है।" लुकमान अली ने भी प्रधानाचार्य को खुश करने के लिए कहा।

और भी कई शिक्षकों ने प्रधानाचार्य की हाँ में हाँ मिलाई। लगभग तय हो गया कि अबकी बार कालेज की पुताई हो ही जाएगी, तभी प्रधानाचार्य ने सभी से पूछा कि कालेज की पुताई किस रंग से करवाई जाए? कुछ शिक्षकों ने अपने-अपने विचार व्यक्त किए।

"सर, कालेज की पुताई सफेद रंग से करवाना चाहिए। सफेद रंग सादगी का प्रतीक है। विद्या की देवी माँ सरस्वती के कपड़ों का रंग भी सफेद है। इस रंग में कालेज चमकने लगेगा।" मानित जी ने सुझाव दिया।

"कालेज चमकने लगेगा! वह तो ठीक है, पर कितने दिन के लिए? सफेद रंग बहुत जल्दी गंदा दिखने लगता है। कोई ऐसा रंग बताइए जो गंदा न दिखे और जिसे देखते ही लोग वाह! वाह! करने लगें।" प्रधानाचार्य ने कहा।

राघव जी प्रधानाचार्य की हाँ में हाँ मिलाते हुए कहा,"आप सही कह रहे हैं, सर। सफेद रंग बहुत जल्दी

गंदा दिखने लगता है। सफेद रंग से पुताई नहीं होना चाहिए।"

"गुलाबी रंग से पुतवाना चाहिए। यह रंग बहुत सुंदर दिखाई देता है। जयपुर गुलाबी रंग की वजह से इतना प्रसिद्ध है। लोग देखते ही कहने लगेंगे कि गोया ये कोई स्कूल नहीं, जयपुर की कोई इमारत है" ओमकार जी ने सुझाव दिया।

"गुलाबी रंग लड़कियों को ज्यादा पसंद होता है। हमारे कालेज में तो केवल लड़के पढ़ते हैं। यह रंग भी लड़कों के हिसाब से सही जंच नहीं रहा।" प्रधानाचार्य ने कहा।

"लाल रंग से पुतवा दीजिए। लाल रंग खतरे का निशान है। यह रंग हमारे कालेज के हिसाब से बहुत अच्छा रहेगा।" घटनाक्रम का मजा लेते हुए सुरेंद्र जी ने कहा।

"लाल रंग से नहीं, काले रंग से पुतवा दें! आज तक कोई कालेज लाल रंग से पुता देखा तुमने!" थोड़ा रोष व्यक्त करते हुए प्रधानाचार्य ने कहा।

अभी कालेज की पुताई के रंग को लेकर चर्चा चल ही रही थी कि अचानक प्रधानाचार्य को कालेज की पुताई में होने वाले खर्च की याद आ गई। उन्होंने कहा कि कल पहले खर्च के बारे में पता किया जाए। रंग तो उसी समय डिसाइड कर लेंगे। प्रधानाचार्य ने सभी को पुताई करने वालों की खोजबीन लगा दिया। काफी मशक्कत के बाद खोजबीन में रईस मिला, उसे कल कालेज आने के लिए कह दिया गया।

अगले दिन रईस कालेज आया और फिर से पंचायत बुलाई गई। प्रधानाचार्य ने रईस से पुताई में खर्च के बारे में पूछा। रईस ने कालेज पुताई का खर्च पाँच लाख रुपए बताया।

"पाँच लाख रुपए! पाँच लाख तो बहुत हैं।" प्रधानाचार्य आश्चर्यचकित होकर बोले।

"साहब! इसमें पुताई का माल और हमार मजूरी है। तुम माल ख़रीद के हमका दै देव और केवल हमार मजूरी दै देहवे।"

"तुम्हारी मजदूरी कितनी होगी?"

"हमार मजूरी एक लाख बैठी।"

"अच्छा! एक लाख मजदूरी! यह बताओ, तुम्हें पुताई करनी है या नहीं।"

"साहेब, अगर पुताई न करै का होत तो हम कहे आइत? तुम बताओ, कित्ता दोगे?"

"अगर तुम माल सहित पुताई एक लाख रुपए में करो तो बताओ।"

"साहेब, तुम रहय देव। पुताई कराओब तुम्हरे बस के नहीं आय।"

प्रधानाचार्य महोदय फिर सभी शिक्षकों, बाबुओं की ओर मुखातिब हुए और कहने लगे-"मैं सोचता हूँ, पुताई रहने दूँ। कुछ ही दिनों में कालेज फिर वैसा का वैसा दिखने लगता है। आप लोगों की क्या राय है?"

"साहब मैं कहने वाला था कि कॉलेज की पुताई में पैसे बरबाद करना बेकार है। कालेज की पुताई न होने से कुछ प्रभाव नहीं पड़ेगा। आप सही कह रहे हैं कि कुछ ही दिनों में कालेज फिर वैसा ही दिखने लगेगा।" लुकमान जी ने सलाह दी।

बड़े बाबू ने रईस से कहा अभी कालेज की पुताई नहीं करवानी है। जब कभी हिसाब बनेगा तो तुमको फिर याद किया जाएगा।

प्रधानाचार्य ने बड़े बाबू से कहा,"अबकी बार मेरी बहुत इच्छा थी कि कालेज की पुताई हो जाए।"

"ठीक है, सर आपकी इच्छा पूरी हो जाएगी।"

"कैसे पूरी हो जाएगी?"

"बस आप चेक पर साइन कर दीजिए, मैं एक लाख रुपए में ही पुताई करवा दूँगा।"

बाबू प्रधानाचार्य के पास पुताई के नाम पर एक लाख रुपए का चेक काटकर ले आए। प्रधानाचार्य ने उस पर साइन कर दिए। अगले दिन कालेज की विकास निधि से पुताई के नाम पर एक लाख रुपए निकाल लिए गए। बाबू ने कुछ रुपए अपने घर की पुताई के लिए रख लिए और शेष रुपए पूरी ईमानदारी के साथ प्रधानाचार्य को सौंप दिए।

०००

गीता रस्तोगी 'गीतांजलि'

मोदीनगर-उत्तर प्रदेश मो. 8279798054

संस्मरण

# वामाक्षी की अनुस्मृतियां

मेरे बचपन का एक किस्सा है। मेरे बड़े मामाजी का मेरे प्रति अत्यधिक स्नेह था। इसी कारण वे मुझे मेरे माता पिता से अत्यन्त अनुरोध पूर्वक मांग कर मात्र चौदह माह की उम्र में ही ले आए थे। मेरे सभी मामा मौसी अविवाहित थे और मामाजी के हृदय में मेरे प्रति वात्सल्य भाव कुछ अधिक ही था। इसका भी एक कारण था जो मुझे काफी बड़ा होने के बाद पता लगा। मेरे नानाजी के बड़े भाई यानी मेरे मामाजी के ताऊजी के बड़े बेटे श्री ओम प्रकाश जी थे। वह मेरे मामाजी के हमउम्र ही थे या शायद एक दो वर्ष बड़े रहे होंगे। वह विवाहित थे और उनकी एक बेटी भी थी, छोटी-सी। मामाजी पूर्ण ब्रह्मचारी थे और आजीवन ब्रह्मचारी ही बने रहना चाहते थे। ओम मामाजी की छोटी-सी बिटिया ने एक ब्रह्मचारी के मन में ऐसा वात्सल्य भाव जगाया कि वह मुझे मेरी मां की गोद से ले आए और मामा से स्वयं मेरी मां बन गए।

नानी मां तो बड़ी मां थीं ही, साथ ही मैंने अपने मामाजी श्री खुशीराम गुप्ता जी में अपने पिता और मां दोनों के दर्शन किए। मैं उनकी थाली में ही उनके साथ भोजन किया करती थी। मामाजी को मीठा बहुत अधिक पसंद था और तीखा बिलकुल भी नहीं। इसलिए उनके लिए अम्मा (मेरी नानीजी) बिना मिर्च की सब्जी सबसे पहले निकाल दिया करती थीं। पूर्व में मिलिट्री से सम्बद्ध होने के कारण मामाजी की खुराक ठीक-ठाक थी; विशेष रूप से वह सब्जी खाना बहुत अधिक पसंद करते थे। मुझे यह देख कर बहुत हंसी आती थी कि अम्मा घर के सब लोगों के लिए जितनी सब्जी बनाती थीं, उस का आधा भाग मामाजी के लिए एक बड़े से बर्तन में निकाल दिया करती थीं। एक कहावत है न, आधे में रब आधे में सब। वह कहावत यहां पर चरितार्थ होती थी। उस बिना मिर्च की सब्जी को मैं और मामाजी दोनों खाते थे। वैसे मुझे सब्जी खाना बिलकुल भी पसंद नहीं था, शायद किसी भी बच्चे को पसंद नहीं होता। मैं या तो मीठे के साथ रोटी खाती थी या सब्जी से रोटी को छू-छू कर खाती थी। बहुत अधिक मीठा और गुड़ आदि खाने के कारण मुझे फोड़े फुंसिया भी अधिक ही होते थे। यह सब तब तक चलता रहा जब तक कि मैंने ठीक से सब्जियां खाना नहीं शुरू कर दिया। अम्माजी ने मुझे बड़े होने पर समझाया कि बहुत अधिक मीठा नहीं खाना चाहिए, सब्जियां भी खाया करो। मगर मैं सब्जी खाना ही नहीं चाहती थी। तब मैंने दस ग्यारह वर्ष की उम्र से सब्जियां खाना शुरू किया। तब भी करेला बहुत ही कड़वा लगता था और मैं छूती भी नहीं थी। और जब कढ़ी बनती थी तब छौंक में डाला गया मेथीदाना मुझे बहुत कड़वा लगता था और मैं उसका एक-एक दाना कटोरी से बाहर निकालकर रख देती थी।

एक और बात थी जो मैं कभी नहीं भूली । मैं जब भी बड़ी कुर्सी पर बैठती थी, तब मेरे पैर जमीन तक नहीं पहुंचते थे जबकि घर के सारे लोग आराम से पैर जमीन पर टिका कर बैठते थे। तब मुझे अपने छोटे होने का एहसास होता था, जो मुझे कतई पसंद न था।

कई बार मैं सोचती हूं कि बच्चों की खुशियां और गम भी कितने छोटे होते हैं और इसी तरह उनकी जिद

और गुस्सा भी। उनकी ख्वाहिशें भी बहुत बड़ी नहीं होती और उनकी छोटी सी दुनिया में खुश रहना उनके लिए बहुत मुश्किल नहीं होता। बच्चों को कोई भी बात समझ न आए तो उन्हें कुछ भी कह कर बहला दिया जाता है और वे कितनी आसानी से मान भी जाते हैं। हालांकि मैं अभी बड़ी हो गई हूं लेकिन कुछ न कुछ बच्चों जैसा स्वभाव मेरे अंदर बाकी है या मुझे बच्चों की सी मासूमियत बहुत पसंद है और इसीलिए मैंने इसको संभाल कर रखा है।

काफी बड़ा होने तक मेरा परिचय अपने पापा से पिता के रूप में नहीं था। मैं उनको बाबूजी कहा करती थी और हमारी केवल औपचारिक भेंटें हुआ करती थीं। वह कभी-कभी हमारे घर (मेरा ननिहाल,उनका ससुराल) आते थे। मुझे पता कैसे चला कि वह मेरे पापा हैं, इसकी भी एक कहानी है। मैं जिस स्कूल में पढ़ती थी, वहां एक फीस कार्ड होता था जिसे फीस जमा करने के लिए साथ ले जाना होता था। एक दिन मेरा ध्यान गया कि पिता के नाम वाले कॉलम में एच. सी.गुप्ता लिखा है। मुझे कुछ भी समझ नहीं आया। मैंने मामाजी से पूछा, "मामा, यहां आपका नाम के.आर. गुप्ता लिखा होना चाहिए। इन्होंने गलत क्यों लिखा हुआ है?"

उन्होंने कहा,"यह ही आपके पिता हैं, हरि चन्द गुप्ता जी। मैं आपका मामा हूं, इसीलिए मेरा नाम नहीं लिखा है ।" तब उन्होंने मुझे इन सब रिश्तों का गणित समझाया जो मुझे उस समय बहुत अधिक समझ नहीं आया था और आज तक भी कुछ कम ही आता है ।"

इस तरह ही पढ़ते-लिखते मैंने एम.एस.सी.की परीक्षा कैमिस्ट्री विषय में पास कर ली। अपने मम्मी-पापा के साथ ज्यादा रहने का अवसर नहीं मिला। जब भी मोदीनगर से गाजियाबाद जाना होता तब मामाजी, नानीजी या मौसीजी के साथ ही होता था और उनके साथ ही लौट भी आते थे।

एम.एस.सी.के बाद मुझे अपने मम्मी-पापा के साथ रहने का अवसर मिला। तब मैंने निश्चय किया कि मैं वहां तब तक रहूंगी जब तक ठीक से साइकिल चलाना नहीं सीख जाती। मेरी छोटी बहन ममता के पास लेडीज साइकिल थी जिस पर चढ़ना अपेक्षाकृत आसान होता है। कुल मिलाकर मैंने इक्कीस दिनों में वहां रहकर साइकिल चलाना सीख ही लिया। मगर मेरा अंजाम भी कुछ वैसा ही हुआ जैसा कक्षा छह में पढ़ी सुदर्शन जी की कहानी 'साइकिल की सवारी' के नायक का हुआ था। मतलब यह कि मुझे साइकिल पर चढ़ना नहीं आया। जब पापा के साथ साइकिल चलाना होता, तब सहारा लेकर चढ़ जाती और बहुत दूर तक साइकिल को भगाए चली जाती। सुबह के समय सड़कें खाली होती थीं और वही मेरा अभ्यास का समय भी था। तब मुझे विश्वास हो गया कि मुझे साइकिल चलाना आ गया। मम्मी के घर पर मुझे हमेशा मेहमान जैसी ही फील आती थी इसलिए मैं मोदीनगर लौट आई। एक शाम मैंने अम्मा से कहा,"अम्मा, चलो मेरे साथ, मैं साइकिल चलाना चाहती हूं। कहीं ऐसा न हो कि मैं भूल जाऊं।" अम्मा मेरे साथ चल दीं मगर थोड़ी दूर जाकर ही न जाने सामने से कौन सी सवारी आई कि मेरे हैंडल का बैलेंस बिगड़ गया और मैं जमीन पर धड़ाम से गिर गई ।

उस दिन के बाद मैंने साइकिल से तौबा कर ली। जो नया सूट पहना था, उसके घुटने में चोट लगने से रफू कराने को चालीस रुपए खर्च करने पड़े। अम्मा और मैं साइकिल को घसीटते हुए राम-राम करते हुए घर तक आए।

०००

डॉ केशव कल्पांत

खुर्जा, बुलंदशहर-उत्तर प्रदेश  मो. 9917276169

# होली

गांव या नगर के मुख्य
चौराहों पर
लकड़ियों के ढ़ेर में
आग लगा कर
बाल भून कर
होली नहीं मनाई जाती।
अनमने से गले मिलकर
रंग और अबीर
की बौछारों से
तन को रंग कर
होली नहीं मनाई जाती।
ऐसी होली, बहुत होली
अब खेलो कुछ नए ढंग की होली

अगर होली मनानी है ना,
तो तुम्हारे पास
बैठा हुआ जो तुम्हारा मित्र है
अन्दर उर से बहुत विचित्र है।
दोनो के दिलों में
जो नफरत का तिनका
अटका हुआ है
उसे निकालो, मसलो
और जला दो होली मैं।
अगर होली मनानी है ना,
तो मजहब के रहनुमाओं के
चेहरों को रंग डालो
भारतीयता के श्वेत रंग से
जिससे वे एक-दूसरे मैं
घुल-मिल जायें
घृणा के बीजों की जगह
लबों पर गुलमोहर खिल जायें।

ओ देशवासियो!
नफ़रत और दुश्मनी
की लकड़ियों को
जन-चेतना की तीली से
भारतीयता की माचिस
पर घिस कर
इस धरा पर एक बार
फिर से होली जलाओ
जिससे देश
धार्मिक उन्माद
और क्षेत्रीयता की
संकीर्णताओं से
मुक्त हो जाये।
हर मन होली की
उमंग से
संयुक्त हो जाये।

०००

योगेंद्र कुमार
ग्रेटर नोएडा-उत्तर प्रदेश मो. 9871395282

# मेरा पारावार

कभी यूँ ही चल पड़ा था मुड़कर
नंगे पाँव ही किसी पगडंडी पर
ढ़ेरों सपनों की उँगली पकड़कर
अभिलाषाओं की गठरी बाँधकर।
बहती हवाओं का दामन थामकर
दिवाबाला की लालिमा समेटकर
मदिर साँझ का माधुर्य सँजोकर
मधुराका की ज्योत्स्ना से रीझकर।
चलते-चलते फिर मिली बावड़ी
मन को लुभाती प्रशान्त झील भी
लघु सरिता ने कभी तृषा बुझाई
जल-प्रपातों ने जिजीविषा जगाई।
देखता रहा नदियों का मधु-धार
निरन्तर गतिमान वो जल-प्रवाह
तलाशता रहा किसी कश्ती को
पार करने उन दूरस्थ पाटों को।
पर जग की ज्वालाओं ने आ घेरा
मेरा गन्तव्य ही मानो धुँधला गया
मेरी पगडंडी ही मुझसे छूट गयी
पथरीली राहों ने उद्भ्रांत किया।
उद्विग्न मन सोचता अब बारम्बार
कैसी छलनामयी है यह मझधार
पता नहीं कहाँ है मेरा पारावार
जिसमें समायेगी यह जीवन-धार।

# तृषा

देखता हूँ संसृति में चहुँओर पसरी तृषा
मानव-मन में व्याप्त एषणाओं की तृषा
तीव्रता से उठती हुई वासनाओं की तृषा
अनुरागपूर्ण अन्तस् के मनुहार की तृषा।
अभिसार को आतुर कामिनियों की तृषा
आसक्त सलज्ज अरुण-अधरों की तृषा
मधु-धार से सिंचित कल्पनाओं की तृषा
मद-विह्वलता में डूबी मदिरता की तृषा।
प्रणय-विधु से संसर्ग हेतु निशा की तृषा
लरजती-गरजती सिन्धु-लहरों की तृषा
बहती हवाओं की सर्वत्र प्रसार की तृषा
गन्तव्य के लिए जल-धाराओं की तृषा।
सृष्टि को झकझोरती विपदाओं की तृषा
अभावों से जूझते मानव-जीवन की तृषा
विकल विश्रान्त निस्तब्ध यौवन की तृषा
असमय प्रौढ़ होते जाते बचपन की तृषा।
परस्पर वैमनस्य में घिरे लोगों की तृषा
वर्चस्व के लिए बेचैन अहंकार की तृषा
सत्ता के लिए आतुर स्वयंभुओं की तृषा
संवेदनाएं कुचलती भौतिकता की तृषा।
ज्यों तृषा ही हो संसृति में जीवन-सत्व
अनेक रूप धरे इसका छा रहा वर्चस्व
करके अपने अधीन मनोवृत्तियाँ सारी
बन बैठी है यह समूचे जग की साम्राज्ञी।।

०००

नेहा वैद
नौएडा - उत्तर प्रदेश मो. 97699 92656

# चंदन-चंदन श्वांस है

वासंती परिधान धरा का मुखरित अब मधुमास है।
छुअनें सारी महुआ जैसी चंदन-चंदन श्वांस है।।

डाली-डाली पात झूमते
कोमल कलियाँ चटख रहीं
पंखों पर रंगों के छींटे
चपल तितलियाँ छिटक रहीं

भला लगे भौरों का गुंजन मधुर सौम्य परिहास है।
छुअनें सारी महुआ जैसी चंदन-चंदन श्वांस है।।

अभिमंत्रित करते नभ को भी
धवल-श्वेत नीरज निर्मल
अभिनव रूप मान भूषित हो
उतर रही रजनी निश्छल

पीकर प्रेम-रसायन जल-थल,नभ में नूतन-रास है।
छुअनें सारी महुआ जैसी चंदन-चंदन श्वांस है।।

मधुऋतु आई, हर प्राणी का
रोम-रोम करता वंदन
फुनगी-फुनगी आम्र-बौर का
मन-प्राणों से अभिनंदन

कर्ण-कुहर में कूक प्रीति की अनुरंजक आभास है।
छुअनें सारी महुआ जैसी चंदन-चंदन श्वांस है।।

# मेरी आँखों के पनघट पर

मेरी आँखों के पनघट पर मत आना
इनका खारा नीर तुम्हारे काम न आएगा।।

हृदय तुम्हारा मिट्टी का कोरा बरतन
मीठे जल की आशा से पुलकित होगा,
इस पनघट पर पड़ा अगर आना तुमको
भाव-कोष घट-अंतस का अकुलित होगा,
यहाँ हृदय की प्यास नहीं बुझ पाएगी
भरा हुआ होकर भी घट रीता रह जाएगा
मेरी आँखों के पनघट पर मत आना
इनकी खीरा नीर तुम्हारा काम न आएगा।।

शीतल नीर नहीं पनघट के सीने में
विषम स्थितियों की है इतनी मार सही,
बाहर से ही लगे लुभावन ये तुमको
भीतर तो पीड़ाओं की भरमार रही,
पीड़ाओं से उष्मित, ताप-भरे जल से
पुष्प तुम्हारे मन का हुलसित न हो पाएगा
मेरी आँखों के पनघट पर मत आना।
इनका खारा नीर तुम्हारे काम न आएगा।।

ooo

लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
गांधीनगर, बस्ती –उत्तर प्रदेश मो. 735530942

# पिता का साया

उम्र कितनी भी हुई थी मेरी
पिता का साया जब तक सर पर था
कैसी भी विषम परिस्थितियाँ होती थी
मुझे कभी डर नहीं लगता था
किसी को कदापि नहीं डरता था
मुझे विश्वास था कि पहाड़ जैसी मुश्किलें भी हों
मेरे पिता दशरथ मांझी की तरह उसे काट कर
मेरे लिए रास्ता बना देंगे...

सच में मेरे लिए वे कष्ट सहते रहे
लोगों के व्यंग्य बाण सुनते रहे
पर उन्होंने मुझे योग्य बनाने के लिए
कोई कसर बाकी न रखा
कड़वे शब्दों को भी चखा
कर्ज तो अनगिनत बार लोगों से लिया
माँ के पास रखे गिने-चुने
गहनों को गिरवी भी रख दिया...

वे चाहते थे कि मैं
पढ़-लिखकर अच्छा इंसान बनूं
शहर में पढ़ाई के दौरान
जब पिता के पास फोन करता था
वे सदा ही हँस कर बात किया करते थे
सदैव अच्छाई की सीख दिया करते थे
मेरे पिता गाँव के प्राथमिक विद्यालय के
शिक्षक थे और खेती-किसानी भी करते थे
मुझे सदैव ही सत्य पथ अनुकरण
और निडरता की सीख दिया करते थे...

गाँव-जवार के लोगों को भी
सच की सलाह दिया करते थे
लोग उनकी बातों को मानते थे
और उनकी सज्जनता के कायल थे...
सच में पिता जी मेरे लिए आदर्श थे
उनकी बातें, उनकी सलाह और उनके आदर्श
आज भी मुझे पथ प्रदर्शक की तरह
झंझावातों में उम्मीद की किरण दिखाते हैं
सच के रास्ते पर चलना सिखाते हैं...

०००

प्रगीत कुँअर
सिडनी, ऑस्ट्रेलिया

# ग़ज़ल

इन रस्तों में कोई रस्ता जाता है ऊँचाई को
या कोई रस्ता आख़िर में दिखलाता है खाई को

भाई को राखी के बदले काग़ज़ मिले कचहरी के
क्या उम्मीदें होंगी भैया दूज पे फिर उस भाई को

चीख कबीरा समझाता था मतलब लेकिन आजकल
प्यार बदलकर लोग घृणा में पढ़ते अक्षर ढाई को

मन की सुंदर झील में विकृत सोचों के शैवाल ना हों
उसको रक्खें साफ़ सदा हम, जमने ना दें काई को

अफ़वाहों का दुनिया भर में रहता है बाज़ार गरम
पर्वत बड़ा बना देती है दुनिया छोटी राई को

रात-दिवस में दिवस-रात में जब बदले, उस बीच में
आते-जाते सूरज देकर जाता है अरुणाई को

०००

डॉ० भावना कुँअर
सिडनी, ऑस्ट्रेलिया

# ग़ज़ल

भला ग़ैरों पे कैसे लूट का इल्ज़ाम धरते हम
हमें अपनों ने लूटा था शिकायत किस से करते हम

वो पत्थर थे अगर इस बात का हमको पता होता
तो फिर न टूटकर टुकड़ों में इतने यूँ बिखरते हम

भले हों रास्ते लंबे सफ़र भी कितना मुश्किल हो
कभी ग़लती से भी उसकी गली से ना गुजरते हम

नशे में चूर हैं इतने ख़ुदा ख़ुद को समझ बैठे
हैं जो मगरूर ऐसों की नहीं परवाह करते हम

हमारे हौसले ही अब हमें परवाज़ देते हैं
कभी गलती से भी उसकी गली से ना गुजरते हम

हम उनकी ग़लतियों को माफ़ ही करते रहे अक्सर
उन्हीं बातों का ख़मियाज़ा भला क्यों आज भरते हम

हैं हमसे कम मगर वो आँकते हैं ख़ुद को क्यूँ ज़्यादा
उन्हें ग़म ये कि ऐसी बात से ज़्यादा निखरते हम

है मेहनत और की उस पर वो अपना नाम लिखते हैं
नहीं ये बात उनके सामने कहने से डरते हम

मिले ऊँचाइयाँ हमको उन्हें अच्छा नहीं लगता
तो उनसे दूर होने को फ़लक पर जा उभरते हम

ज़रूरत ही नहीं हमको बहुत ज़्यादा सँवरने की
खुदा का नूर है हम पर नहीं ज़्यादा सँवरते हम

०००

निर्देश निधि
बुलंदशहर-उत्तर प्रदेश मो. 9358488084

# रूठ गई हैं फुर्सतें

आधुनिक जीवन से रूठ गई हैं फुर्सतें
उभर आती थीं अक्सर खाली कागजों पर खेल सी

लूओं से भरी दुपहरियों में पड़ी रहती थीं
खस-खस की टाटी वाली खिड़कियों के पास
लटकती हरी - भरी बेल सी

सर्द रातों में चारों तरफ अलाव के
सुनती थीं किस्से, कहती थीं कहानियाँ,
कंपकंपाती, ठिठुरती फुर्सतें

गाँव की चौपाल पर गर्मियों की साँझ ढले
हुक्कों की गुड़ - गुड़ के सुर में सुर मिलाती
पसर जातीं घंटों
बान वाली खाटों पर निठल्ली फुर्सतें

साँझ से भी पहले ही
शिव मंदिर की सीढ़ियों पर
सज जाती थीं सनातनी फुर्सतें

याद है बिरजू को कम्मों की आँख में मुसकुराती
गुड़िया और पप्पू सी
कंधे चढ़ी, गोद पड़ी, खिलखिलाती फुर्सतें

गारे सनी, गलियों के गात पर
गिल्ली डंडा खेलतीं अलमस्त फुर्सतें

परिवर्तन की पवन में जाती हैं सामने से
तीव्र गति वाली रेल सी
व्यस्तता के सोने बीच रहती बंधेल सी
अब तो फुर्सतों के साथ भी रहतीं हैं फुर्सतें
अक्सर बेमेल सी

गोधूलि में जीवन की
बरसतीं निरंतर बरसात बन
थकी - मांदी ज़िंदगी को बाढ़ बन डराती हैं
निर्दयी फुर्सते

०००

अलका शर्मा
नोएडा—उत्तर प्रदेश मो. 8755722357

# मुश्किल कितना था राघव

मुश्किल कितना था राघव, तुम्हें बन कर राम रहना
राज महल के सारे सुख तज, संकट वन के सहना।

कौशल्या माँ की विनती सुन, दिव्य रूप तज डाला
बाल सुलभ चंचल लीलाएं, पग पैजनियाँ माला
थीं मन भावन सब क्रीड़ाएं, मात पिता का गहना
राजमहल के सारे सुख तज, संकट वन के सहना।।

वचन निभाया त्रस्त पिता का, अनुपम दिया उदाहरण
आज्ञा मान पिता की उनके, दुख का किया निवारण
राज कुंवर से ज़्यादा भाया, सन्यासी बन रहना
राज महल के सारे सुख तज, संकट वन के सहना।।

आदर्शों की ख़ातिर तुमने, सीता को भी त्यागा
जीवन सारा काटा तुमने, बनकर एक अभागा
लेकिन फिर भी रामराज्य का, पूर्ण किया निज सपना
राजमहल के सारे सुख तज, संकट वन के सहना।।

जीवन भर का निर्वासन, सहकर आदर्श जिए थे
अपमानों के गरल के कितने, कड़वे घूंट पिए थे
होता नहीं सहज इतना, ऊँचे शिखरों पर टिकना
राज महल के सारे सुख तज, संकट वन के सहना।।

तुमने जन जन के मानस में, हर पल वास किया है
चौदह बरस घोर कष्टों में, भी वनवास जिया है
अंत करो निर्वासन का अब, अपने धाम में बसना
राज महल के सारे सुख तज, संकट वन के सहना।।

ooo

अवधेश सिंह

वैशाली, गाजियाबाद (उ.प्र.) मो. 9868228699

# मृतकों की फ़ेहरिश्त

ये पृथ्वी के किसी भूभाग पर
दरिंदगी के साथ
कीड़े मकोड़े की तरह मारे जा रहे
बच्चों बुजुर्गों महिलाओं और युवाओं के नाम नहीं हैं
ये एलान है मानवता विरोधी क्रूर ताकतों के खिलाफ
ये दस्तावेज हैं जिनमें
मृतकों के नाम, उम्र और
रिश्तों को दर्ज किया जा रहा है
ताकि इतिहास के क्रूर पृष्ठ से
कुछ भी न छूटे
कोई कह न सके कि
ये अनाथ लाशों के पीछे
कोई नाम लेवा नहीं था
मृतकों के आखिरी सफर में
पेन की स्याही
आंसुओं के स्थान को भर रही है
सुपुर्दे खाक पर कोई सगा न सही
कोई शोक गीत
कोई अंतिम सफर का कारवां न सही
नफरत की आग
और मौत के फरमान से
निडर कलम तो है
ये फेहरिस्त नहीं है
ये मृतकों की सूची नहीं है
ये स्याही के फूल हैं
गमक रही है जिनसे
रिश्तों की गर्माहट
अपनत्व की खुश्बू
कलम से कातिल को
दिया जा रहा अनूठा उपदेश है :
देखो, तुम्हारी बंदूक गोली बम मिसाइल तोपखाने की शून्य ताकत
देखो, मानवता अहिंसा से उपजे प्रेम की क्षमता
बेशक नेस्तनाबूद करने का जुनून
तुम्हारी सोच समझ विवेक को अंधा कर चुका है
बेशक तुम मानवता को शर्मसार करने को उतावले हो
बेशक तुमने सिर्फ नफरत और हिंसा का पाठ पढ़ा है
लेकिन यह मृतकों की सूची है
कलम और स्याही से निकली चुनौती
जब भी तुम्हे ममता की भूख का एहसास होगा
जब भी तुम्हे रिश्तों की पहचान होगी
जब भी तुम खुद से कुछ सवाल करोगे
तुम्हे सोने नहीं देगी
यह कागज पर कलम स्याही से दर्ज
मृतकों की सूची, जो यक़ीनन है..
आतंकवाद के खिलाफ
आतंकियों के ताबूत पर
जड़ी जा रही कील के मानिंद।

०००

रवि कुमार

गाजियाबाद-उत्तर प्रदेश मो. 9810020438

# आयो बसन्त

आयो बसंत सखी आयो बसन्त
सरसों की पीली चादर ताने
पुलकित हुआ मन उठी उमंग
जागो री सखी आयो बसन्त

आमों में सखी आये बौर
फूलों में नित नया रंग
सर्द हवायें हुई उड़न्त
आयो री सखी आयो बसन्त

धरती औ नभ मिल कर गाते
जीवन में खुशियाँ हो अनन्त
सूफी संतो ने संग मनाई
आयो री सखी आयो बसन्त

हर्षित हो मन उपवन
आओ सब मिल कर गाये
ऋतुओं का राजा बसन्त
आयो री सखी आयो बसन्त

# हाइकु

आया वसंत
मन हैं पल्लवित
फूली सरसों
*
भीड़ से दूर
तन्हाईयों के बीच
मन पुकारे
*
तुम क्या रूठे
खिलौना बालक का
गुम हो जैसे
*
इक इशारा
तकते रहे राह
जीवन भर
*
पहेली कैसी
जन्म और मरण
मध्य सुधारो
*
बच के चलो
रौंद देगी दुनिया
है बेरहम
*
धन या यश
तेरी ही अनुकम्पा
तुझे न भूलूँ
*
खामोश लब
असर रखते है
बेज़ुबा नहीं

ooo

डॉ. जितेंद्र कुमार
मेरठ—उत्तर प्रदेश, मो. 9412835058

# नन्हा बालक

मैं मलबे पर पड़ा हुआ हूँ, नन्हा बालक रोता हूँ।
विध्वंसों का खेल तुम्हारा, घायल मैं क्यों होता हूँ।।

सुन लो दुनिया के राजाओं,
कहते खुद को दानी ज्ञानी।
डूबे हुए स्वार्थ में दंभी,
करते हो भारी मनमानी।
महलों में षड्यंत्र रचो तुम, मैं लाशों पर सोता हूँ।

धर्म आस्था बाँटी तुमने,
धरती जनता बाँटी तुमने।
बाँट बाँट कर राज करो तुम,
यह मानवता बाँटी तुमने।
युद्धों का व्यापार तुम्हारा, मैं अपनों को खोता हूँ।

बारूदों ने फूँके सपने,
जले खिलौने सब मेरे हैं।
जिन आँगन में खेला करता,
चीलों गिद्धों के डेरे हैं।
कैसे तुमको मानव मानूँ, मुँह शोणित से धोता हूँ।

अँधियारों के सरदारों तुम,
नित उजियारों को खाते हो।
जीवनदात्री क्षिति छाती पर,
जहरीली फसल उगाते हो।
मैं फूलों का उपवन प्यारा, गया आज फिर जोता हूँ।

ठेकेदार बने ईश्वर के,
स्वर्गों का लोभ दिखाते हो।
पूरी की पूरी कौमों को,
अंधा हथियार बनाते हो।
चलूँ नहीं जो राह तुम्हारी, तो कालिख से पोता हूँ।

सर्वश्रेष्ठ कहते मानव को,
पर तुम तो जीव निम्नतर हो।
मनुज जाति के रक्त पिपासू
तुम भक्षक तक्षक अजगर हो।
निगल गये शुभ संस्कृति को, मैं आह कराहें ढोता हूँ।

धर्म ग्रंथ जागीर तुम्हारी,
पन्ना - पन्ना कब्जाधारी।
जैसे चाहो व्याख्या कर लो,
रौंदों सारी दुनियादारी।
तुम ओले बरसा देते हो , जहाँ प्रेम मैं बोता हूँ।
मैं मलबे पर पड़ा हुआ हूँ नन्हा बालक रोता हूँ।

ooo

शिवपूजन त्रिपाठी
बाँदा (उत्तर प्रदेश) मो.

# वसुधैव कुटुम्बकम्

आओ! भारत-वासी भाई!
मिलकर नव निर्माण करें।
नवयुग का हो नायक भारत
नव-भारत का निर्माण करें।।
अनुगुंजित हों चारों दिशाएं
अम्बर तक गूंजे एक ही स्वर।
विश्वगुरू भारत की जय जय
सदा रहे तेरी कीर्ति अमर।।
समृद्ध-विरासत रही हमारी
हम न भूलें सम्मान करें।
हिन्दू मुस्लिम सिख ईसाई
मिलकर सब आह्वान करें।।
दया-प्रेम-करुणा के मोती
केवल भारत में मिलते हैं।
सदाचार सद्भाव से हम सब
मिलकर भारत में रहते हैं।।
वसुधैव कुटुम्बकम् के आदर्शों का
जगती में प्रचार करें।
हम एक थे हम एक हैं
एक होंगे यह प्रचार करें।।
छोड़ निजी स्वार्थों को बन्धु!
देशहित का आओ करें विचार।
मानवता की रक्षा खातिर
समरसता का करें प्रचार।।

सर्वोपरि है राष्ट्र हमारा
चलो राष्ट्र का अब उद्धार करें।
मान बढ़े भारत का जग में
ऐसा कोई काम करें।।
भाई-चारा बढ़े परस्पर
सुख दुःख के साथी रहें सदा।
प्रेम-तरू सी बढ़े लतायें
वाणी में अमृत घुले सदा।।
कटुता तजकर आपस की
हम आपस में अनुराग धरें।
हितकारी भावों को मन में
धरें सभी प्यार करें।।
गंगा-जमुना की धारायें
जैसी मिलती है सागर में।
वैसे ही हम रहें सदा ही
मिलजुलकर अपने भारत में।।
राम कृष्ण नानक गौतम की
शिक्षा पर पुनः विचार करें।
राम-रहीम हैं प्राण देश के
इन प्राणों पर न वार करें।।

ooo

राकेश वामन्या
इंदौर, मध्य प्रदेश  मो. 9650109938

# हाय रे अमीरी

अमीरों की कलाई पर, महँगी घड़ी का प्रभाव देखा है
इनकी बेचारगी मे हमने, समय का अभाव देखा है

हजार बारह सौ रुपए की थाली, अमीरों के लिए है
गरीब  की दाल रोटी पर हमने, जीवन का  दाव देखा है

कभी देखा है अमीरों के चेहरे पर, इंसानियत का रंग ?
गाँव मे हमने हर चेहरे पर, अपनेपन का भाव देखा है

गरीब दो जून की रोटी खाकर, चैन की नींद सोता है
हमने अमीरों की नींद पर, दवाओं का प्रभाव देखा है

यूँ तो खाली खाली सी रहती है गरीब की थाली
चुनाव के वक्त हमने उसमें शाही पुलाव देखा है

सर्दी में अकेले से वो रहते हैं शहर में हीटर के साथ
गाँव में हमने साझा चूल्हा और अलाव देखा है

चले आना बाहें फैलाकर तुम, जब शहर मे दम घुटने लगे
हमने शहर से ज्यादा, स्वच्छ और  खुशहाल गाँव देखा है

ooo

प्रेम कुमार प्रेम
खुर्जा, बुलंदशहर –उत्तर प्रदेश मो. 9761130239

# प्यारी तितली

प्यारी कोमल कोमल सी है
तू पल्लव सी लगती है ।
पतली पतली रंग बिरंगी
सबके मन को हरती है।।

फूलों की बगिया में बैठी
शोभा वहां बढ़ाती है।
कभी यहां तो कभी वहां पर
बच्चों को मिल जाती है।।

बच्चे तेरे पीछे दौड़ें
हाथ में उनके आती है ।
रंग बिरंगे रूपों में तू
अपनी कला दिखाती है ।।

अपने रूप रंग से तू
बच्चों के मन भाती है ।
प्यारी प्यारी कोमल कोमल
तू तितली कहलाती है।।

# आया वसंत

प्यारा वसंत आया है
सबके मन को भाया है
खुशियां लेकर आया है
मधुमास कहलाया है
प्यारा वसंत आया है
प्यारा वसंत आया है।

फूलों को खिलाया है
खुशियां लेकर आया है
कड़क ठंड को हटाया है
प्यारा वसंत आया है
प्यारा वसंत आया है।

कोहरा अभी हट पाया है
सूरज अभी हंस पाया है
मौसम भी शरमाया है
प्यारा वसंत आया है
प्यारा वसंत आया है ।

मौसम भी शरमाया है
मेरे मन को भाया है
खुशबू लेकर आया है
प्यारा वसंत आया है ,।
प्यारा वसंत आया

ooo

भारती कुमार
नवाबगंज, कानपुर (उत्तर प्रदेश)

# तुम्हारे लिये

आँखों से निकले ये आँसू नहीं

छलके कुछ मोती अनमोल हैं।

स्वीकार करो तो कर लेना तुम

अपना दर्द समझ करके।।

पीड़ा में खोज रही हूँ

खुशी के कुछ नगमें लेकर।

गा सको तो गा लेना तुम

अपना गीत समझ करके।।

खोया है यदि प्यार तुमने

उसे ढूँढ़ लेना अपनों में आकर।

पा सको तो पा लेना तुम

अपना खोया प्यार समझ करके।।

संग-संग चले थे जहाँ से हम

वो राहें अभी वहीं पर हैं।

चल सको तो चल लेना तुम

दो कदम साथ चल करके।।

जो गीत मैंने लिखा है

सिर्फ तुम्हारे लिये।

दे सको तो दे देना स्वर

अपना गीत समझ करके।।

पलकों में सजा लेना हमें

दिल में बिठा लेना।

कर सको तो कर लेना

याद मुझे तुम अपना समझ करके।।

०००

डॉ. ब्रजराज ब्रजेश,
गुलावठी-बुलंदशहर-उ.प्र. मो. 9690077683

# उसी जगह

फिर जा रहे हो
उसी जगह
जहां खतरे में है
शहर के सीने तले
बसे मकान की अस्मिता
और मकान का मालिक
छुप गया है
कहीं दूर जाकर जंगल में
जहां रात की कालिमा को
पी रहा है तिमिर
बिना कुछ बोले
कंकालों ने
गायब होते देखा है
चूल्हे का धुँआ
जले हुए सूरज ने
खुरच दिया
इतिहास सड़क का
जहां रोटी से मिलकर
आ रही है एक रेखा
लालिमा ओढे

फिर जा रहे
उसी जगह।

# मातृभाषा

भाषाओं के जंगल से
गुजरता हूँ जब
लगता है भय
संवादहीनता का,
अजनबीपन का... .
लघुता के साथ-साथ
होता है अहसास
अकेलेपन का.
घेर लेते हैं
अस्तित्व के प्रश्न
ओढ़नी पड़ती है कृत्रिमता
दिखना पड़ता है वह
जो नहीं हूँ मैं
आजीविका के दबाव में
जन्म लेते हैं यन्त्रजीव
देश में, परदेस में
श्रेष्ठता की होड़ में
चक्कर काटता है यन्त्र
अचानक सरल सहज
संप्रेषनीयता के स्वर से
टूटते हैं अवरोध,
खुलते हैं संवादद्वार
फैलता है आलोक
भावातिरेक में
बिखरता है यन्त्र
नाचती है आत्मा
मानो मिली हो कहीं
मुझे मेरी मां!

०००

अरविन्द कुमार 'विदेह'
लखनऊ-उत्तर प्रदेश मो. 7408403570

# अलमस्त आलाप

## एक सात्विक सुरुचि-संपन्न गुरुजन द्वारा काल-चिंतन

'अलमस्त आलाप' की एक अत्यंत मनोहारी 'उपहार-प्रति' प्राप्त हुई, और भगवान कृष्ण के मोर-मुकुट और बाँसुरी की याद बरबस आ गयी। उपहार-प्रति को मेरे लिए भेजते समय डॉक्टर शर्मा ने पुस्तक के सारांश के रूप में लिखा है: 'युग संवेदना के प्रखर स्वर'; और यह वाक्यांश पुस्तक के सकल सारांश को अभिव्यक्त कर देता है। साथ ही, दो सशक्त कवियों के वक्तव्य भी पुस्तक की आत्मा को प्रकट करते हैं। फिर, डॉक्टर शर्मा ने इस पुस्तक को 'सुधी अध्येताओं' के लिए समर्पित किया है, तो ठीक ही किया है, क्योंकि इस पुस्तक का रस लेने के लिए अध्येता का सुधी होना अत्यंत आवश्यक है; और मैं तो कहूँगा कि अध्येता का डॉ शर्मा की ही तरह सात्विक और शुचि प्रवृत्ति का भी होना आवश्यक है। दोनों प्रारंभिक वक्तव्यों को पढ़ने के बाद पाठक के लिए और कुछ कहने को कुछ बचता नहीं है। डॉक्टर शर्मा ने भी कहा है कि ये लेख परंपरागत अनुशासन से इतर हैं; सचमुच ऐसा ही है। हर एक पाठक अपने दृष्टिकोण से शब्दों के अर्थ निकालता है, लेखों के मर्म को समझता है; मैंने भी वही किया है:-- हमने माटी के दीप जलाकर घरों की दहलीजों, द्वारों और मुड़ेरों को तो जगर-मगर कर लिया है किंतु हृदय को हम कितना जगर-मगर कर पाये हैं! प्रीति, करुणा, ममता, भ्रातृत्व और शांति तो गूलर का फूल बन गई हैं। इस प्रकाश-उत्सव में हमें अपनी आत्मा को उज्ज्वल बनाने के लिए संकल्प लेना चाहिए। रोशन कर दो उनको भी जो तरस रहे हैं आँगन, गलियाँ! ख़्वाब! ज़िन्दगी में नवोत्कर्षण के ख़्वाब!! राष्ट्र में उन्नति-समृद्धि के ख़्वाब!!! आओ स्वर्णिम कल के लिए मानवतावादी संचेतना, सांस्कृतिक उन्नयन, सांप्रदायिक सद्भावना, राष्ट्रीय अखण्डता और विश्व-शांति के मंगल ख़्वाब बुनें!

'मुद्दत के बाद ख़्वाबों के कुछ फूल खिले हैं, डर है कि कोई नींद से हमको न जगा दे!' ईश्वर बचाए आज की संकीर्ण, विकृत, खोखली, आधुनिक सभ्यता से धरती के इस 'आनंद-लोक' को! सारा देश भ्रष्टाचार, अराजकता, चरित्रहीनता से आक्रांत है, मगर हम इनको समाप्त करने की बात नहीं करते। हिंदू मुसलमान धर्म नहीं, वर्ग हैं। नफ़ाख़ोरी और भौतिक वर्चस्व की महत्वाकांक्षा से प्रदूषित हमारा मस्तिष्क विवेक-दृष्टि से वंचित हो गया है। आओ! बाहर निकलें, घास पर चलें, आकाश की ओर देखें, और सोचें कि इंसान कैसे बने रहें। अपवित्र राजनीति ने सांप्रदायिकता, क्षेत्रीयता और जातीयता की ऐसी शतरंज बिछायी है जिसमें सारा देश उलझकर रह गया है। कार्यालय, न्यायालय, चिकित्सालय, विद्यालय, सभी संस्थान भ्रष्ट आचरण में लिप्त हैं। यह तभी हो सकेगा जब हमें अपने परिवार, समाज, राष्ट्र और विश्व से प्यार होगा। मित्रो! दुआ

करो, मौसम खुशगवार हो! चौराहों, क्लबों और कॉफी -हाउसों में हो रहे घिनौने प्रदर्शन को जीवन का सत्य समझा जा रहा है। हमी को समय की विकृतियों से संघर्ष करना है। महाकवि सुमित्रानंदन पंत ने प्रकृति के समक्ष अन्य सभी सुखों को तुच्छ समझा। यह दुनिया बड़ी विचित्र है; यहाँ के दस्तूर भी बड़े निराले हैं: आप प्यार से पुचकारेंगे तो यह आपको दुत्कारेगी, और आप दुत्कारेंगे तो यह आपको गले लगाएगी। (मुझे यह सूक्ति इस काल का और इस पुस्तक का प्राण-वाक्य जैसी प्रतीत हुई।)

'सकल विश्व में व्याप्त है ज्यों बिनु देह अनंग,
त्यों बिनु डोरी उड़ रही भारत देश पतंग।'

पढ़ने-पढ़ाने का चलन खत्म-सा होता जा रहा है। उत्तर-पुस्तिका को गंभीरता से पढ़ना समय की बर्बादी समझा जाने लगा है। जिन शहीदों के बलिदानों से हमने आजादी पायी थी उनकी याद को हमने बहुत गहरे दफना दिया है। हम अपने भीतर के इंसान को मारकर हिंसक पशु बन गए हैं। जातिवाद की आग ने तो सारे चमन को ही फूँक दिया है। कुत्सित राजनीति ने देश का युग-युग का सम्मान लूट लिया है। 'दिल ढूँढता है' में 'दीव' के विषय में जो वर्णन है बहुत मनोरंजक एवं आनंददायी है: पूरे किले में एक अद्‌भुत धुंध-सी छायी है जो यहाँ के वातावरण को रहस्यमय बनाती है। नारियल के वृक्षों के झुण्डों से घिरे दीव के शांत मार्गों को और दूर-दूर तक फैली दिलकश समुद्री वादियों को बाइक पर बैठकर निहारना भी एक अद्‌भुत रोमांचकारी अनुभव था, जिसकी याद मन को आज भी रससिक्त कर देती है। कितनी बड़ी विडंबना है, जिन्हें हम भौतिकवादी कहकर मुँह बिचकाते हैं, उनके पास अपनी यात्रा का एक सार्थक सरोकार था, और हमारे पास सिर्फ सैर-सपाटा! छात्रसंघ के चुनावों की डुगडुगी पीटकर हमारे राजनीतिक आकाओं ने कॉलेजों के वातावरण में उबाल पैदा कर दिया था। वैसे भी इस देश में शिक्षा कोई अहम् विषय तो रह नहीं गया है! व्यावसायिकता ने हमारे जीवन को एक यंत्र बनाकर रख दिया है।

मगर मासूम नौनिहालों के साथ घिनौने अत्याचार के काले अध्याय 'निठारी काण्ड' ने उसकी हैवानियत का नग्न चित्र उजागर कर दिया है। (और न्यायालयों ने तो जले पर नमक ही छिड़क दिया है दरिंदों को निरपराध कहकर!)

शिक्षा-जगत में व्याप्त बाजारवाद ने जैसे सारी व्यवस्था को जकड़कर निष्प्राण कर दिया है। साहित्य एक अद्‌भुत कला है। साहित्य हृदय के प्रत्येक भाव को सरल बनाकर इस तरह व्यक्त करता है कि भावुक का मन रससिक्त हो उठता है। 'माटी का पुतला कैसे नाचतु है!' शरीर प्रेम की जन्मभूमि है, मगर उसकी पूर्णता या चरितार्थता आत्मा तक पहुँचने में ही निहित है। प्रेम ही एकमात्र संजीवनी है, और साहित्य इस अनमोल संजीवनी को वितरित और संरक्षित करने का सबसे उपयुक्त संसाधन है। ससुराल पहुँचकर उसकी चंचलता लुप्त हो जाती है। बहू बन जाने के बाद उसे गंभीरता का आवरण ओढ़ लेना पड़ता है।

जाति-संप्रदाय के गुणा-भाग में संलिप्त राजनीति! व्यावसायिकता के चंगुल में फँसी शिक्षा! सुरक्षित ठौर तलाशती आधी आबादी! खुशवंत सिंह पर लिखा लेख भी बहुत मार्मिक है और सत्य भी। खुशवंत सिंह का हास्य-बोध अद्‌भुत था। लेकिन वे इस बात की इजाजत किसी को भी नहीं देते थे कि कोई उनके घर से किताब लेकर जाए परन्तु वापिस न करे। साथ ही, रात्रि 8:00 बजे के बाद वहाँ रुकने की किसी को भी इजाज़त नहीं थी। उन्होंने आपात्काल के दौरान इंदिरा

गाँधी का समर्थन किया, मगर स्वर्ण मंदिर में सैनिक कार्रवाई के विरोध में अपना पद्म-भूषण सम्मान भारत सरकार को लौटा दिया। सुबह-सुबह उन्हें गुरुवाणी और अन्य धार्मिक प्रवचन सुनने में आनंद आता था। आध्यात्मिकता या सूफ़िज़्म या फिर दोनों में उनका भरोसा था। मृत्यु आखिरी पूर्ण-विराम है। मैं एक ऐसे आदमी के रूप में मरना चाहता हूँ जिसको किसी तरह का अफ़सोस न हो, और जिसमें किसी के प्रति दुर्भावना न हो। जननी, जन्म-भूमि और कर्म-भूमि स्वर्ग से भी महान है!

मुझे मनचाहा व्यवसाय मिला। छात्र-छात्रा तो मेरे बहुत आत्मीय रहे हैं; यदि मैं उन्हें अपने जीवन की सबसे बड़ी पूँजी कहूँ तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। इस परिदृश्य का एक बहुत सुंदर पहलू यह है कि हमारे देश में 65% युवा ही हैं; और इससे भी अधिक सुखद तथ्य यह है कि ये युवा ही सर्वाधिक शिक्षित और प्रशिक्षित हैं। हम बेरोजगारी का दंश झेल रहे हैं, आरक्षण की मार सह रहे हैं, तथा धरना-प्रदर्शनों की भूल-भुलैया में भटक रहे युवाओं के चेहरों पर अवसाद की घनीभूत लकीरों को पढते हैं। आये दिन अनियमितताओं, पक्षपात और भ्रष्टाचार की भेंट चढ़ती प्रतियोगी एवं चयन परीक्षाओं की तपिश में झुलसते युवाओं के सपनों की पीड़ा को समझते हैं??? सोशल मीडिया पर साहित्यिक चैनलों की दुकानें सजी हुई हैं। अपनी रचना भेजिए और साहित्यकार बन जाइये। वे दिन उड़न-छू हो गये, जब साहित्यकार को अपनी रचना छपवाने के लिए पापड़ बेलने पड़ते थे। जब चाहे आप मनपसंद कवि, कहानीकार, नाटककार, आलोचक, जो चाहे बन सकते हैं। लिंक पर लिंक उपलब्ध हैं; क्लिक कीजिए और छा जाइए साहित्य-संसार में! यू-ट्यूब की फ्री सेवा भूल गए? पूँजीवाद में कुछ भी फ्री नहीं होता!

राजकपूर पर लिखा लेख और 'मेरा नाम जोकर' पर लिखा लेख बेहद प्यारा है और नास्टैल्जिया को जगाता है। लंबे वनवास में तपस्वी राम ऋषियों-मुनियों की तपोभूमि को राक्षसों के अत्याचार से मुक्त कराते हुए दलितों- आदिवासियों को संगठित-संरक्षित कर अपनी अद्भुत संघर्षशीलता का परिचय देते हैं। बल हो, बुद्धि न हो, तो विध्वंस मचेगा; इसलिए बल, बुद्धि और विद्या इन तीनों के बिना कुछ भी संभव नहीं है। जाति, धर्म, भाषा, संप्रदाय और निजी स्वार्थों में लिप्त हम अपने जन-सेवकों/जन-प्रतिनिधियों को चुनते हैं, शराब के एक-एक पाउच पर अपना वोट देते हैं। मित्रो! जैसी करनी, वैसी भरनी!

हमें जीवन को सकारात्मक और रचनात्मक रहकर जीना चाहिए, शायद वह कुछ सहज, सरल और सरस बन जाए। दोष और बुराइयाँ तो स्वभावगत सभी में होती हैं,इस सच्चाई को ईमानदारी से आत्मसात् कर लेना ही बुद्धिमत्ता है। यही अर्द्धनारीश्वर की संकल्पना है, जो महिला-पुरुष की पूरकता को दर्शाती है। युद्ध या विस्थापन जैसे विषयों के चित्रांकन में यदि इनके विरुद्ध अरुचि उत्पन्न हो तब तो उसको स्वीकार किया जा सकता है, लेकिन यदि घृणा, आक्रोश या प्रतिशोध उत्पन्न हो, तब वह गहन विचारणीय हो जाता है। इस पुस्तक में असीम सरसता और सकारात्मकता है!

**पुस्तक : अलमस्त आलाप (लेख संग्रह)**
**लेखक: डॉ. देवकीनंदन शर्मा**
**प्रकाशक : ए आर पब्लिशिंग कं., दिल्ली –110032**
**प्रथम संस्करण : 2023**
**आईएसबीएन: 978-93-94165-41-0**

रेखा देवी शर्मा
भरतपुर (राजस्थान ) मो. -9413838168

# प्राचीन भारत में वैष्णव धर्म

प्रस्तुत पुस्तक प्राचीन राजस्थान में वैष्णव धर्म के उद्भव एवं विकास से सम्बन्धित है। पुस्तक को अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से तीन खण्डों में विभक्त किया है। तीन खण्ड आठ अध्यायों में विभाजित हैं। **प्रथम खण्ड** प्राचीन राजस्थान एवं वैष्णव धर्म और राजस्थान की भौगोलिक तथा ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से सम्बन्धित है। उक्त खण्ड में तीन अध्याय हैं। प्रथम अध्याय में स्रोत- सामग्री का विस्तृत विवेचन है जिसमें विभिन्न पुरातात्विक साक्ष्यों एवं साहित्यिक साक्ष्यों के माध्यम से यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि प्राचीन राजस्थान में वैष्णव धर्म की लोकप्रियता के पर्याप्त साक्ष्य उपलब्ध हैं।

द्वितीय अध्याय में प्राचीन राजस्थान की भौगोलिक और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का निरूपण किया गया है। प्राचीन राजस्थान के भौगोलिक प्रदेशों व इसके प्रागैतिहासिक युग के परिचय के साथ लेखक ने प्राचीन जनपदों (मत्स्य, शूरसेन, शाल्व आदि) को भी रेखांकित किया है। साथ ही राजस्थान के कतिपय नवीन जनपद यथा यौधेय, मालव, अर्जुनायन, शिवि, राजन्य, उद्देहिक, उत्तमभद्र, मौखरी, आभीर आदि के सम्बन्ध में ज्ञात तथ्यों का विवेचन भी विद्वान लेखक ने विस्तार से किया है। राजस्थान की भौगोलिक एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के विवरण के क्रम में राजपूत युगीन नवीन भौगोलिक इकाइयों के उदय एवं उनकी राजनीतिक परिस्थितियों का विवेचन किया गया है।

तृतीय अध्याय में वैष्णव धर्म के उद्भव और विकास की प्रकिया का पुनरावलोकन किया गया है। प्राचीन अवधारणा के प्रसंग में वैदिक काल का उल्लेख करते हुए यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि देवमण्डल में विष्णु का धीरे -धीरे महत्व बढ़ता है और ब्राह्मण काल तक आते आते विष्णु वैदिक धर्म के अत्यन्त प्रभावशाली देवता बन जाते हैं। वैष्णव धर्म नारायण की उपासना का ही विकसित रूप है। हिन्दू चिंतन में नारायण को आदि पुरुष माना गया है। नारायण एवं विष्णु प्रारम्भ में यद्यपि अलग अलग देवता थे किन्तु आरण्यक काल में दोनों का एकीकरण हो गया । इस तथ्य को लेखक ने विविध साक्ष्यों और ग्रंथों से स्पष्ट एवं पुष्ट किया है।

**द्वितीय खण्ड** में राजस्थान में वैष्णव धर्म के उद्भव और विकास पर विस्तार से प्रकाश डाला है। यह चतुर्थ और पंचम अध्यायों में विभाजित है।

चतुर्थ अध्याय में राजस्थान में वैष्णव धर्म के आरम्भिक विकास को रेखांकित करते हुए ई. पूर्व की अंतिम शताब्दियों से लेकर गुप्तकाल तक के अभिलेखों एवं कलावशेषों के आधार पर विकास क्रम का अध्ययन किया है। वैष्णव धर्म के मूल उद्गम शूरसेन जनपद अर्थात् मथुरा मण्डल से मध्यकाल में भक्ति प्रधान इस

धर्म का प्रचार-प्रसार दक्षिणी भाग से प्रारम्भ होकर किस प्रकार सम्पूर्ण राजस्थान में प्रसारित हुआ इसका विस्तार से विवेचन किया है।

पंचम अध्याय में राजपूत कालीन राजस्थान में वैष्णव धर्म के परवर्ती विकास को दर्शाया गया है। राजपूत कालीन अभिलेखों का विश्लेषण करते हुए यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि विभिन्न राजपूत शासक एवं जनसाधारण वैष्णव धर्म के अनुयायी थे।

पुस्तक के **तृतीय खण्ड** में वैष्णव कलाकृतियों अर्थात् मंदिर एवं प्रतिमाओं का अध्ययन किया गया है। षष्ठम अध्याय में दक्षिण एवं दक्षिण पूर्वी राजस्थान में प्राप्त कलावशेषों के अध्ययन से यह सिद्ध किया है कि क्षेत्र में गुप्तोत्तर काल तथा हर्ष के काल से लेकर 12 वीं शताब्दी के मध्य में वैष्णव धर्म जनमानस में प्रमुखता से व्याप्त था।

सप्तम अध्याय में पूर्वी एवं मध्य राजस्थान के प्राचीन शूरसेन एवं मत्स्य क्षेत्र, ढूंढाड़, मालव, शाकम्भरी, अजमेर एवं शेखावाटी में प्राप्त कलाकृतियों के अध्ययन के माध्यम से बताया है कि पूर्वी एवं मध्य राजस्थान में वैष्णव धर्म प्राचीन काल से ही जनमानस की आस्था और विश्वास का प्रमुख केन्द्र रहा है।

अष्टम अध्याय में पश्चिमी एवं उत्तरी राजस्थान के वैष्णव केन्द्रों का अध्ययन, प्राप्त कलाकृतियों के माध्यम से किया है। अध्ययन के अन्त में नवम अध्याय के स्वरूप में विवेच्य विषय का सारांश दिया है। आरम्भिक काल से लेकर ई. सन् 12 वीं शताब्दी तक राजस्थान में वैष्णव धर्म के स्वरूप को भलीभांति रेखांकित किया गया है।

पुस्तक के अन्त में संदर्भ ग्रंथों की विस्तृत सूची तथा कतिपय महत्वपूर्ण वैष्णव कलाकृतियों के चित्रफलक लेखक के विषय पर गहन एवं व्यापक अध्ययन का प्रतीक है।

संक्षेप में विद्वान लेखक का आग्रह है कि प्राचीन काल में वैष्णव धर्म राजस्थान की जनता में लोकप्रिय एवं प्रमुख आस्था का विषय था। अपने विकास क्रम के परवर्ती चरण या पूर्व मध्यकालीन युग में वैष्णव धर्म ने भक्ति आंदोलन के रूप में लोकमानस को आन्दोलित किया और भक्त जनों के हृदय में नव आस्था और नवोल्लास का संचार किया। भारतीय धर्म, दर्शन एवं समाज को नई दिशा प्रदान की। पुस्तक की भाषा-शैली सहज, सरल एवं भावों को व्यक्त करने में सफल रही है। धार्मिक अध्ययन में रुचि रखनेवाले पाठकों के लिए यह पुस्तक अभिरुचि का विषय होगी।

**पुस्तक - प्राचीन राजस्थान में वैष्णव धर्म (एक ऐतिहासिक सर्वेक्षण)**

**लेखक - डॉ. सतीश कुमार त्रिगुणायत**

**प्रकाशक - भारतीय विद्या मंदिर, कोलकाता**

०००

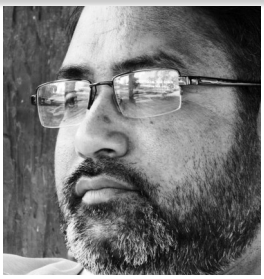

मुकेश निर्विकार
बुलन्दशहर(उ0प्र0)- मो. 9411806433

# प्रेरणास्पद कविताएँ

'प्रेरणा के फूल' श्री प्रेम शर्मा 'प्रेम' का प्रथम काव्य-पुष्प है। इस कविता संग्रह में कुल 56 कविताएं हैं, जो अधिकांशतः तुकान्त हैं। कविवर 'प्रेम' जी के लिए कविता करना निज कर्तव्य का निर्वाह करना है। कविता के प्रति अपने इस दृष्टिकोण को वह 'मैं कवि हूं' कविता में इस प्रकार से अभिव्यक्त करते हैं:-"मैं भक्त कवि/कुम्भन का वंशज हूॅं/मुझे सीकरी की चाह नहीं है/अपने कर्मों के पथ पर चलता हूॅं/निज कर्तव्य करता हूं।" इसी कविता में वह आगे कहते हैं:-"मुझे लाल-नीली बत्ती की परवाह नहीं है/'पद्मश्री' की चाह नहीं है/मुझे निज कर्म करना है/कवि धर्म रखना है।"

कवि की कविता आदर्शोन्मुखी परम्पराओं से सम्बद्ध है। सभी कविताएं शिक्षाप्रद हैं एवं हमारे सामाजिक सरोकारों से जुड़ी हैं। कवि ने इन कविताओं में निरी कपोल- कल्पनाओं के वितान नहीं ताने हैं, अपितु समकालीन एवं समसामयिक परिदृश्य से संपृक्त होकर कविताएं कहीं हैं। मसलन्-'वंदना' शीर्षक प्रारंभिक रचना में भी कवि ने 'उद्योगों में अग्रसर रहने' तथा 'उत्पादन में भारत का स्तर ऊँचा करने' की वीणावादिनी मां सरस्वती से प्रार्थना की है। यानि कवि की कविता आधुनिक समय-संदर्भों से जुड़ी हुई है।

संवेदनशीलता, करूणा एवं परदुःखकातरता कविता के उत्स हैं। "वियोगी होना पहला कवि/आह से उपजा होगा गान/उमड़ कर आंखों से चुपचाप/बही होगी कविता अनजान" कहकर सुमित्रानन्दन पंत जी ने इस तथ्य पर चिर-काल के लिए अपनी अमिट मोहर लगा दी है। कवि भी अपनी 'वंदना' में वीणावादिनी मां सरस्वती से यही वंदना करते हैं कि-"मेरी लेखनी में/ऐसी रोशनाई भर दे/जो अबला, निर्धन, दुखियारों की/वेदना को स्वर दे।"

इस संग्रह की कई कविताएं अत्यन्त प्रेरक एवं प्रयाण-गीत सरीखी हैं, जैसे-'राही आगे बढ़ता चल', 'दीप बनाम युवा (दीप से तुम जलते रहो), 'शिक्षा की अलख जगाओ', 'पढ़ना होगा' आदि। संग्रह में 'सर्व शिक्षा अभियान' (शिक्षा की अलख जलाऐं/पढ़ना होगा), 'बेटी बचाओ-बेटी पढ़ाओ' (बेटी बचाओ) तथा जल-संरक्षण पर केन्द्रित कविताएं हैं। एक कविता में तो कवि ने रंग-बिरंगी पुस्तकों की तुलना प्रेयसी से की है। कई कविताओं के माध्यम से हमारे त्यौहार एवं पर्वों ने भी संग्रह में अपनी उपस्थिति दर्ज करायी है-होली, बसंत आदि ऐसी ही कविताएं हैं। हमारे राष्ट्रीय पर्व 'गणतन्त्र दिवस', 'स्वतंत्रता दिवस' भी अपनी पूरी देश -भक्ति एवं राष्ट्र-प्रेम की भावनाओं के साथ संग्रह में समाहित हैं। कवि ने 'आजादी के अमृत' महोत्सव को भी संग्रह में स्थान दिया है। हमारे युग की भीषण एवं वैश्विक महामारी 'कोरोना' पर केन्द्रित कविता भी संग्रह में है, कोरोना से जब समूची दुनिया हिल गयी,

तो भला कवि इस भयावह कालखण्ड को अपनी कविताओं में क्यों नहीं दर्ज करते। 'आजादी', 'वीर संदेश' आदि कविताओं में कवि के देशप्रेम की मुखर भावाभिव्यक्ति है, तो वहीं कवि अपनी 'हिन्दी की गाथा गाता हूं' कविता में मातृभाषा हिन्दी का गौरवगान करते हैं।

कवि को अपनी भाषा, सभ्यता और संस्कृति पर अत्यन्त गर्व है। उनके 'गर्व से कहो हम भारतीय हैं' उद्घोष में हमें विवेकानन्द जी के शब्दों की अनुगूंज सुनाई पड़ती है। कवि को अपनी संस्कृति का प्रत्येक पहलू पसंद है। 'हमारा नववर्ष' कविता इसी बात की पुष्टि करती है। कवि ने कई कविताएं राष्ट्रनायकों की स्मृति में उनको विनम्र श्रद्धांजलिस्वरूप प्रस्तुत की हैं। यह, सचमुच, राष्ट्रनायकों के प्रति कवि की लेखनी का आभार ज्ञापन है। 'रानी पद्मावती' आदि कविताओं में इतिहास गौरव की अनुभूति है जिसके वशीभूत होकर कवि रानी पद्मावती जैसी नारियों का बार-बार नमन करते हैं। कवि ने 'ध्यान करो' कविता में जनाधिक्य की समस्या के प्रति आगाह किया है। यह, वाकई, विकट चुनौती है। अब हम चीन को भी पीछे छोडकर संसार की सबसे बडी आबादी बन चुके हैं। इतनी अपार जनसंख्या के लिए देश के संसाधन दिनोंदिन बौने होते जा रहे हैं। कवि की कविताओं में उनका गांव है, जो उन्हें शिद्दत से बुलाता है; खुर्जा नगर है, जिसमें कवि रहते हैं, खुर्जा नगर की व्यथा है, महंगाई की मार है, इतिहास का गौरव है, अपने पुरखों के प्रति आदर-सम्मान है एवं श्रद्धेय गुरूजनों को श्रद्धांजलि ज्ञापन है। कवि अपने पुरखों के प्रति अपनी रचनाओं में भरपूर आभार ज्ञापित करते हैं। कविताओं में 'नारी', 'भिखारिन', 'श्रमिक देवता', 'कृषक' आदि चरित्र हैं जिनके प्रति कवि ने अपनी हार्दिक संवेदना-दया-करूणा व्यक्त की है। कवि अपनी कविताओं में मात्र विषाद-विदग्ध नहीं हैं, अपितु पुरजोर सकारात्मक हैं। संग्रह की शीर्षक कविता 'प्रेरणा के फूल' में कवि की पंक्तियां दृष्टव्य हैं-"समय की ठोकरें हमने भी खायीं हैं/ समय के थपेड़े/हमने भी झेले हैं/असफलता के कांटे/हमें भी चुभे हैं", लेकिन आगे कवि कहते हैं-"उसी तम से/ एक आशा की/किरण निकली/वही बढ़ती हुई/हमारे जीवन का/सवेरा बनकर आयी/वही छोटी किरण निकली/हमारी सफलता बनकर आयी।" कवि का यही संकल्प और सकारात्मकता देखने बनती है जब वह कहते हैं कि-"सफल होने की आशा/हमने नहीं छोड़ी/ तम कितना भी घिर आया/फिर भी वह हमें न डिगा पाया"

इस कविता-संग्रह की कविताएं बड़ों के साथ-साथ बच्चों के लिए भी समानरूप से पठनीय एवं शिक्षाप्रद हैं। 'प्यारी तितली' आदि कुछ कविताएं तो अपनी बुनावट में बाल-गीत सरीखी हैं। कवि अपनी कविताओं में निरन्तर सदाचार, सद्शिक्षा और सीख प्रदान करते है। एक कविता में उन्होंने अभिवादन का महात्म्य समझाया है। वह पाठकों को उनके कर्तव्यों के प्रति भी आगाह करते हैं। इस अर्थ में कवि की कविता अपने देशवासियों से सीधे अपील या नारे मंे तब्दील हो जाती है। मसलन्-"शिक्षा जीवन का है संबल/शिक्षा से मिलता है हमको बल"। एक कविता में उन्होंने 'मद्यपान अभिशाप है' समझाया है तथा एक अन्य कविता में मतदाताओं को जागरूक किया है।

कवि के पास कविता अपनी प्राचीन परम्परा से आयी है। इसलिए वह रसखान, सूर, तुलसी, मीरा से खासे प्रभावित दिखते हैं। 'मेरे मन को भावत है (कन्हैया)' इसी बात की पुष्टि करती है। कवि की

कविताओं में लोक-जीवन, लोक-संस्कृति तथा लोक-ध्वनि है। "रामचन्द्र कह गए सिया से"' कविता इसकी बानगी है जिसमें वह अपसंस्कृति एवं सांस्कृतिक पराभव की व्यथा दर्ज करते हैं। कवि की सांस्कृतिक और धार्मिक मिथकों में गहरी आस्था है; अस्तु, वह देश की वर्तमान समस्याओं के समाधान के लिए ईश-देवताओं से पुरजोर आह्वान करते हैं।

कवि की 'यथार्थ' नामक कविता में एक दार्शनिक वितान है। इसमें जीवन-मरण को लेकर भारतीय-दर्शन सन्निहित है; कवि ने इस कविता में नश्वरता का गहरा बोध कराया है।

संग्रह में कई विदाई गीत हैं जो अत्यन्त मार्मिक हैं। 'मैं कवि क्यों बनूं' कविता में हमें एक तीखे व्यंग्य एवं कवि के क्षणिक क्षोभ की प्रतीति होती है। यह उनका मात्र व्यंग्यात्मक कथन है, अन्यथा तो वह मूलतः एक कवि ही हैं, वह कवि-कर्म से विरत रह ही नहीं सकते हैं।

कवि का यह पहला कविता संग्रह होने के कारण, स्वाभाविक रूप से, हमें इनके प्रति उदारता बरतनी होगी; किन्तु अगले कविता-संग्रहों में कवि को कथ्य की गहराई एवं शिल्प पर ध्यान देना होगा तथा सपाट बयानी एवं गद्यात्मक विवरण से बचना होगा।

इस संग्रह के आत्मकथ्य में कवि ने स्वयं कहा है कि-"प्रेरणा के फूल' कविता संग्रह में जो कविता सम्मिलित हैं, उन्हें लिखने का मेरा उद्देश्य पाठकों में देशभक्ति, परोपकार, त्याग, बलिदान, सत्यनिष्ठा और जीवों पर दया करना जैसे गुणों को विकसित करने का काम कर सके। इस कविता संग्रह की प्रत्येक कविता प्रेरक का काम करेगी। यह कविता-संग्रह उस बगीचे की तरह है, जिसमें अनेक प्रकार के फूल खिले हैं, उसी प्रकार मैंने भी इस कविता संग्रह में हास्य, व्यंग्य, माधुर्य, नारी-सम्मान, बालिका शिक्षा पर बल और मद्यपान छोडने की प्रेरणा, तो दूसरी ओर महापुरूषों एवं गुरूजनों को श्रद्धांजलि द्वारा नमन किया गया है।"' इस कविता-संग्रह को पढ़ने के बाद पाठक को अहसास होता है कि कवि अपने शब्दों पर खरे उतरे हैं।

यह संग्रह भारतीय संस्कृति, जीवन-दर्शन, राष्ट्रवाद, मातृप्रेम, भाषाप्रेम आदि पर मुखरता से बात करता है।

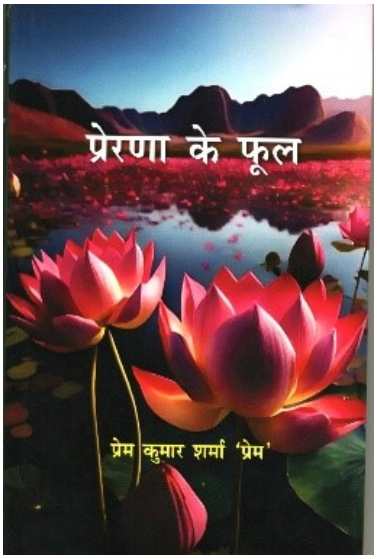


**पुस्तकः 'प्रेरणा के फूल' (कविता-संग्रह)**
**कथाकारः प्रेम कुमार शर्मा 'प्रेम'**
**प्रकाशकः ए आर पब्लिशिंग कं, दिल्ली-110084**
**प्रथम संस्करण: 2023**
**आईएसबीएन: 978-93-94165-85-4**

०००

डॉ. ईश्वर सिंह - संपादक - शुभोदय

## साहित्यिक हलचल

# प्रो. महावीर सरन जैन द्वारा अंतरराष्ट्रीय कार्यक्रम की अध्यक्षता

शुभोदय साहित्यिक ई पत्रिका के संरक्षक प्रो. महावरी सरन जैन ने 28 अक्तूबर 2023 को भारत तथा मॉरीशस सरकार की द्विपक्षीय संस्था, विश्व हिंदी सचिवालय द्वारा आयोजित आभासी कार्यक्रम 'हिंदी में अभिव्यक्ति' की अध्यक्षता जिसमें सभी प्रतिभागी उनके विचारों से लाभान्वित हुए। ऐसे लब्ध प्रतिष्ठित व्यक्तित्व को संरक्षक के रूप में पाकर शुभोदय परिवार स्वयं को गौरवान्वित महसूस करता है।

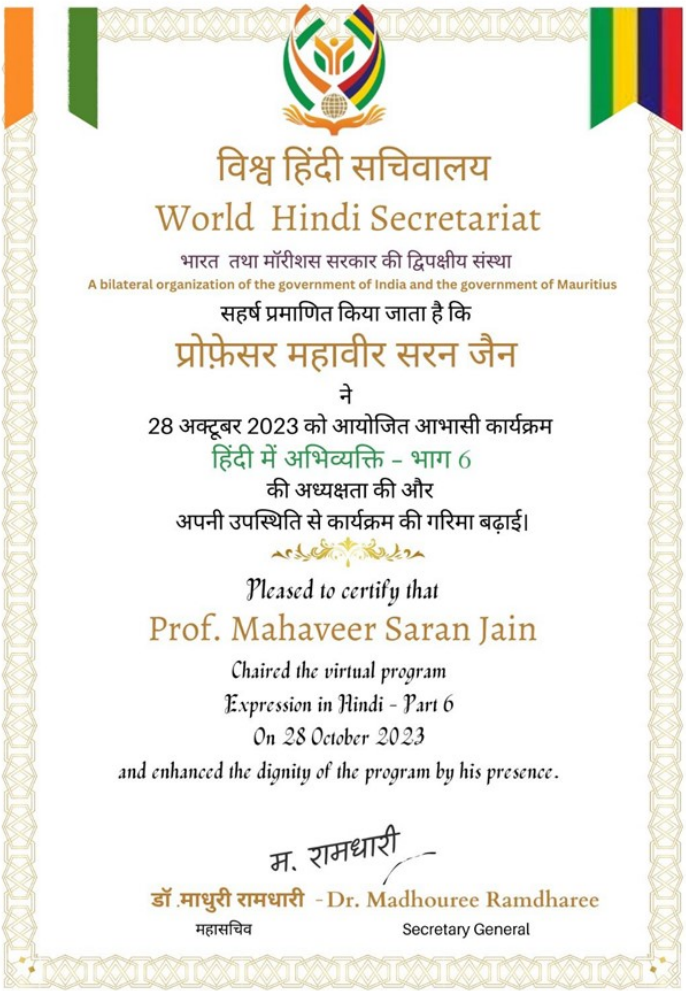

विश्व हिंदी सचिवालय

World Hindi Secretariat

भारत तथा मॉरीशस सरकार की द्विपक्षीय संस्था

A bilateral organization of the government of India and the government of Mauritius

सहर्ष प्रमाणित किया जाता है कि

प्रोफ़ेसर महावीर सरन जैन

ने

28 अक्टूबर 2023 को आयोजित आभासी कार्यक्रम

हिंदी में अभिव्यक्ति - भाग 6

की अध्यक्षता की और

अपनी उपस्थिति से कार्यक्रम की गरिमा बढ़ाई।

*Pleased to certify that*

Prof. Mahaveer Saran Jain

*Chaired the virtual program*

*Expression in Hindi - Part 6*

*On 28 October 2023*

*and enhanced the dignity of the program by his presence.*

म. रामधारी

डॉ .माधुरी रामधारी - Dr. Madhouree Ramdharee

महासचिव Secretary General

# चिट्ठी आई है ....

**'शुभोदय' के शरद अंक 2023 पर हमें अपने पाठकों की की विभिन्न प्रतिक्रियाएं प्राप्त हुई हैं। चुनिंदा पाठकों की चिट्ठियों को हम यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं:**

'शुभोदय' का शरद अंक-2023 बहुत अच्छा लगा। डॉ. कमल किशोर गोयनका जैसे लब्ध प्रतिष्ठित साहित्यिक व्यक्तित्व के संरक्षण में प्रकाशित पत्रिका का संपादन अपने आपमें गौरव की बात है। सारगर्भित संपादकीय, विविध लेखों, हास्य व्यंग्य, कहानी, लघु कथा, कविता, गीत, गजल, साहित्यिक गतिविधियों और पुस्तक समीक्षाओं के माध्यम से पत्रिका का कलेवर बहु-आयामी बन पड़ा है। संपादकीय..... 'इस पथ का उद्देश्य नहीं है श्रांत भवन में टिक रहना..., पत्रिका को निरंतर ऊंचाई प्रदान करने की प्रतिबद्धता प्रदर्शित करता है। विजय रंजन जी से साक्षात्कार के माध्यम से नवांकुरों को दिया गया संदेश 'बोलो कम, लिखो अधिक, पढ़ो बहुत अधिक' बहुत अच्छी सीख है। अवधेश सिंह का लेख 'आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस - मौलिक सृजन को चुनौती' बहुत ही समीचीन और अद्यतन है। पूनम सुभाष की कहानी 'लालच भली बला है' आज का यथार्थ बयां कर रही है। डॉ. टी महादेव राव का व्यंग्य 'मुखोटे' जीवन में अवसर के हिसाब से मनपसंद मुखौटों का जीता- जागता वर्णन है। एक सुझाव है कि विषय सूची में लेखकों के नाम के आगे विषयों का उल्लेख भी करें तो अच्छा रहेगा।

*डॉ. राम विचार यादव, थाणे – मुंबई*

शुभोदय के इस अंक के सभी रचनाकार हिंदी साहित्य के सुस्थापित विद्वान है। पत्रिका अपने आप में एक सफल प्रयास है। सुझाव है कि इसमें कुछ हिंदी पहेली जैसे ज्ञानवर्धक विषय और चुटकुले भी जोड़े जा सकते हैं।

*हरगोविंद बालानी, गुरूगाम– हरियाणा*

शुभोदय में छपी कहानी, कविता, लेख या अन्य रचनाएं सभी अच्छी हैं। संपादक मंडल इसलिए तारीफ का हकदार है कि जिस दौर में साहित्य से लोगों का सरोकार घटता जा रहा है और बहुत कम लोग (जो भीड़ स्वस्फूर्त नहीं हो) जो छपते हैं, जुटते हैं और जब देश में सम्मानित और राष्ट्रीय स्तर की पत्रिका अपना अस्तित्व बचाने के लिए जूझ रही हैं, बड़े प्रकाशन समूहों ने पाठक वर्ग के अभाव में, प्रकाशन बंद कर दिया है, जब इंटरनेट और इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यम ने सब खत्म कर दिया है, प्रिंट माध्यम जिसका सरोकार सीधे दिमाग से होता है, दम तोड़ रहा है, तब आप एक साहित्यिक पत्रिका प्रकाशित कर रहे हैं।

*संतोष कुमार सिंह, देहरादून-उत्तराखंड*

मुझे प्रसन्नता है कि देश-विदेश के साहित्यकारों को आपने शुभोदय पत्रिका से जोड़ा है और जन-मानस शुभोदय से जुड़कर लाभान्वित हो रहा है। समाज के निर्माण और उसमें सकारात्मक परिवर्तन लाने में सुविचारों/सद्भावनाओं की बड़ी अहम् भूमिका रही है। इतिहास इसका गवाह है। पत्रिका का नाम और प्रस्तुति बेहद आकर्षक है। रचनाएं बहुत अच्छी हैं।

*जोधा सिंह रावत,*
*इंदिरापुरम-गाजियाबाद-उ.प्र.*

अंक बहुत अच्छा है, यदि इसमें एक चीज़ और जोड़ दी जाये तो शायद हिन्दी के पाठको का और भला होगा

होगा। एक अंक से दूसरे अंक के बीच जो हिन्दी साहित्य की नयी किताब / रचनाएँ आयी है उनके से कुछ चुनिंदा ( पढ़ने योग्य) के नाम और चार-चार पंक्तियों में उसका परिचय दे दे तो पाठक को आसान संदर्भ मिल जाएगा।

*शिवेंद्र सिंह परिहार, नोएडा*

शुभोदय का दूसरा अंक बहुत ही सुंदर, आकर्षक, संग्रहणीय और रुचिकर है। डॉ महादेव राव, पूनम सुभाष, एम एम ख़ान, शैदी जी और पराशर की रचनाएं, स्वातंत्र्य संग्राम में हिन्दी की भूमिका, लघु कथाएँ जैसी रचनाएँ एक से बढ़ कर एक है। पत्रिका की डिज़ाइनिंग आकर्षक है। प्रकाशन के नियम बहुत ही सटीक हैं और शायद इसी कारण पत्रिका इतनी शालीनता लिए हुए है। सभी लेखकों और प्रकाशन टीम को हार्दिक बधाई और शुभकामनाएँ।

*सलीम खान, एचपीसीएल-मुंबई*

"शुभोदय" सारगर्भित होने के साथ बेहतर लुक भी रखती है, साधुवाद। इसमें "प्रथम सोपान" नाम के पृष्ठ शुरू कर सकते हैं ताकि नए रचनाकार पत्रिका से जुड़ सकें। एक पृष्ठ, गत अंक के परिप्रेक्ष्य में हो, ताकि की रचनाओं पर पाठक अपनी टिप्पणियाँ दे सकें। .

अपने लेख पर किसी और की टिप्पणियाँ, लेखकों के लिए हमेशा आकर्षण का केंद्र होती हैं और इस ईपत्रिका के कुछ कलर्ड प्रिंट कराके एक पत्रिका के रूप में भी रखें। मुझे विश्वास है कि शुभोदय साहित्यिक पत्रिका के शून्य को निर्विवाद रूप से भर देगी।

*नीरज दीक्षित, कानपुर – उ.प्र*

शुभोदय के निरंतर प्रकाशन के लिए बहुत बहुत बधाई और शुभकामनाएं। शरद अंक 2023 में -

कानियां बहुत रोचक थीं। कविता और ग़ज़ल भी ठीक लगीं लेकिन साक्षात्कार थोड़ा लंबा था। यदि कुछ हास्य रचनाएं इसमें शामिल की जाएं तो पत्रिका में चार जांच लग जाएंगे।

*सुधीर कुमार भारद्वाज, दिल्ली*

# 'शुभोदय' ई-पत्रिका में रचना प्रस्तुत करने के लिए सामान्य नियम

**भाषा एवं लिपि:**

'शुभोदय' हिंदी भाषा की ई-पत्रिका है। अतः सभी रचनाएं हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि में उचित व्याकरण और वर्तनी के साथ लिखी जानी अपेक्षित हैं।

**प्रकाशन अंक:**

शुभोदय के वर्ष में दो अंक 'वसंत अंक' और 'शरद अंक' प्रकाशित किए जाते हैं। अतः वसंत अंक के लिए 28 फरवरी तथा शरद अंक के लिए 31 अगस्त तक टंकित रचनाएं शुभोदय की ईमेल: shubhodayashubham@gmail.com पर प्राप्त हो जानी चाहिए।

**विषय:**

रचना किसी भी विवादास्पद विषय पर या किसी समुदाय की भावनाओं को ठेस पहुँचाने वाली या राजनीतिक, धार्मिक, जातीय अथवा क्षेत्रीय विद्वेष पैदा करने वाली नहीं होनी चाहिए।

**रचनाओं के प्रकार:**

शुभोदय के लिए लेख, कहानी, लघु कथा, संस्मरण, कविता, गीत, ग़ज़ल, पुस्तक-समीक्षा और साहित्य जगत की महत्त्वपूर्ण हलचल आदि से सम्बन्धित मौलिक एवं अप्रकाशित रचनाएं भेजी जा सकती हैं।

**रचनाओं का आकार: :**

शुभोदय' ई-पत्रिका के लिए कविता, गीत, गजल, लघु-कथा के लिए अधिकतम 300 शब्द तथा लेख, कहानी, संस्मरण के लिए 1000 शब्द सीमा निर्धारित है।

**मौलिकता:**

शुभोदय में केवल मौलिक रचनाएं ही स्वीकार की जाती हैं। यदि किसी अन्य रचनाकार की कृति से कोई उद्धरण लिया गया है तो उसका उल्लेख कोष्ठक में या फुट नोट में किया जाना चाहिए।

**नैतिक मानक:**

लेखन में नैतिक मानकों का पालन अनिवार्य है। अभद्र भाषा या असामाजिक सामग्री अस्वीकार्य है।

**स्वरूपण:**

स्पष्ट शीर्षकों, उपशीर्षकों और अनुच्छेदों के साथ लेख को सही ढंग से प्रारूपित किया जाना चाहिए। रचना यूनिकोड़ में टंकित होनी चाहिएं। रचनाओं की वर्ड और पीडीएफ दोनों ही फाइल भेजी जानी चाहिए।

**चित्र:**

यदि लेख में चित्र हैं, तो लेखक को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि वे प्रासंगिक हैं, उच्च गुणवत्ता वाले हैं, और उन पर उपयुक्त शीर्षक हैं।

**कॉपीराइट:**

लेखकों को अपने लेखों के कॉपीराइट 'शुभोदय' ई-पत्रिका में स्थानांतरित करने के लिए सहमत होना चाहिए, जो ई-पत्रिका को प्रिंट और डिजिटल सहित किसी भी प्रारूप में लेख प्रकाशित करने की अनुमति देता है।

**प्रस्तुत करने की समय सीमा:**

रचनाकार 'शुभोदय' ई-पत्रिका द्वारा निर्धारित समय सीमा में अपनी रचनाएं प्रस्तुत करें। निर्धारित अवधि के बाद प्राप्त रचनाएं स्वीकार नहीं की जाएंगी।

**संपादन:**

'शुभोदय' ई-पत्रिका संपादक मंडल लेखक के मूल अर्थ और मंशा को बनाए रखते हुए स्पष्टता, लंबाई और शैली के लिए लेखों को संपादित करने का अधिकार सुरक्षित रखता है।

**स्वीकृति:**

'शुभोदय' ई-पत्रिका संपादक मंडल लेखकों को उनके लेखों की स्वीकृति या अस्वीकृति के बारे में सूचित करेगा। उचित संशोधन के बाद अस्वीकृत लेख पुनः जमा किए जा सकते हैं।

**भुगतान:**

लेखकों को उनके द्वारा प्रस्तुत रचनाओं के लिए कोई मौद्रिक मानदेय नहीं दिया जा सकेगा।

**आवश्यक जानकारी:**

रचना के साथ रचनाकार का नवीनतम फोटो (जेपीजी या जेपीईजी में), नाम, पता एवं मोबाइल नंबर होना चाहिए।

**अस्वीकरण:**

किसी रचना में व्यक्त विचार और उनकी मौलिकता का पूरा दायित्व रचनाकार का होगा। पत्रिका में प्रकाशित होने पर भी उसकी जबाबदेही रचनाकार की होगी, संपादक मंडल की नहीं। प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों को शुभोदय के विचार नहीं माना जाएगा।

ooo

शुभोदय

शुभोदय